87780

श्री चन्द्रप्रभ

लक्ष्य बनाएँ पुरुषार्थ जगाएँ

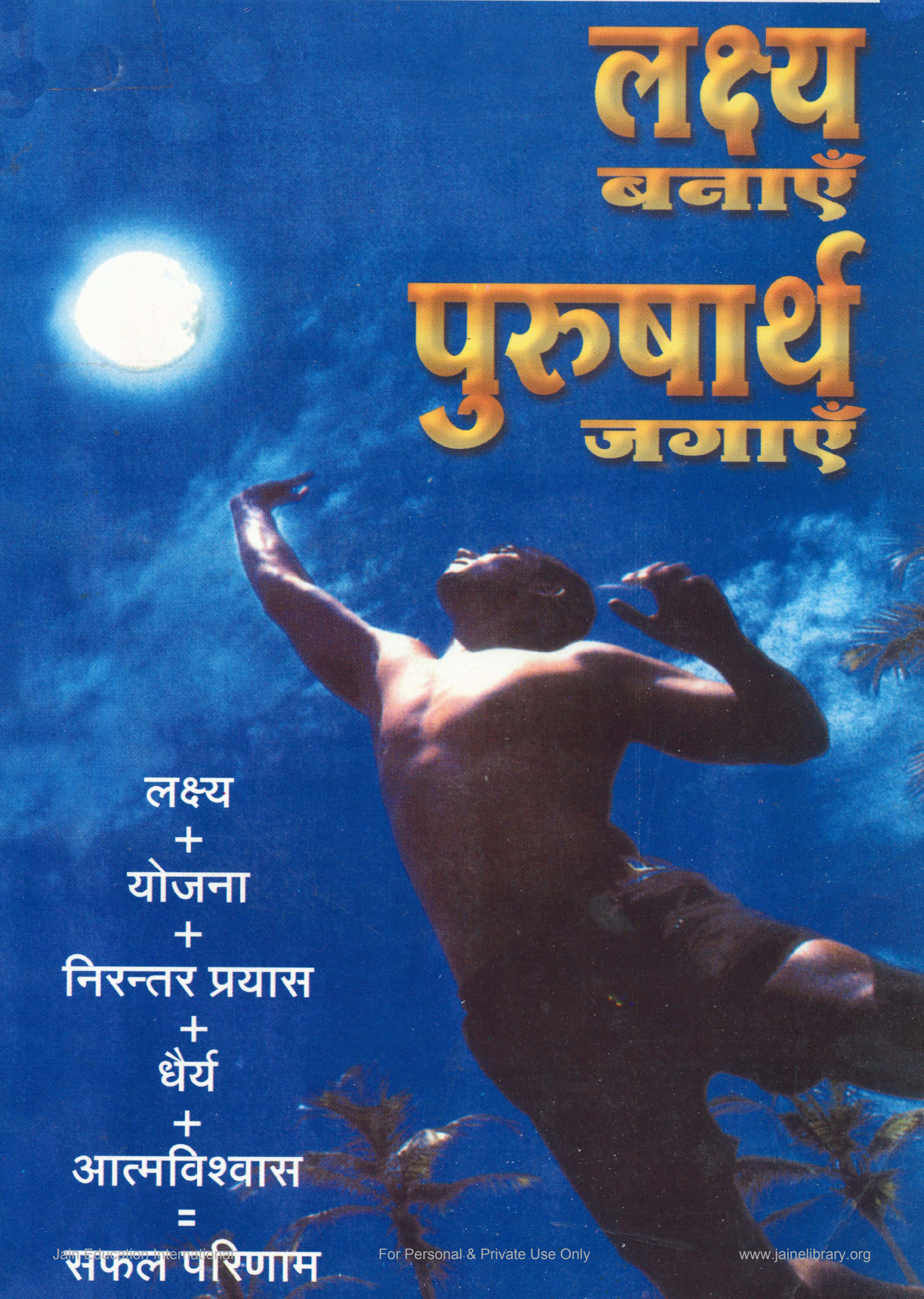

लक्ष्य
+
योजना
+
निरन्तर प्रयास
+
धैर्य
+
आत्मविश्वास
=
सफल परिणाम

लक्ष्य बनाएँ पुरुषार्थ जगाएँ

जीवन में वे ही जीतेंगे
जिनके भीतर जीतने का पूरा विश्वास है.

सफलता के शिखर तक पहुँचाने वाली प्रकाश-किरण

श्री चन्द्रप्रभ

प्रकाशन-वर्ष : मार्च 2006 तृतीय संस्करण

प्रकाशक : जितयशा फाउंडेशन
बी-7 अनुकंपा द्वितीय, एम. आई. रोड़, जयपुर (राज.)
मुद्रक : बबलू प्रिन्टर्स, जोधपुर
मूल्य : 20/- रुपये

पूर्व स्वर

सफलताएँ संयोग से नहीं मिलतीं। सफलता समर्पण चाहती है। हर सफल व्यक्ति का जीवन-महल श्रम और निष्ठा की नींव पर ही टिका होता है। जो व्यक्ति नाकामयाब रहते हैं, उनका जीवन समंदर में भटकती हुई किश्ती की तरह होता है, जो बिना लक्ष्य के पानी के थपेड़ों के बीच अपने वज़ूद को बचाने के लिए विवश होती है। हमारा अस्तित्व उस किश्ती की तरह बनकर न रह जाए, हम अपना एक लक्ष्य निर्धारित करें और उसे पाने के लिए दिलो-जान से जुट जाएँ। यही पूज्यश्री चंद्रप्रभजी की पावन-प्रेरणा है—लक्ष्य बनाएँ, पुरुषार्थ जगाएँ।

प्रख्यात चिंतक और जीवनद्रष्टा पूज्यश्री चंद्रप्रभजी का साहित्य विपुल है, शब्द की दृष्टि से ही नहीं, अर्थ के नजरिये से भी। अर्थ की गहराइयों से लिपटा हर शब्द सीधा हृदय पर दस्तक देता है और व्यक्ति को सोचने के लिए विवश करता है। पूज्यश्री का न भाषा के प्रति आग्रह है, न पंथ विशेष के लिए दुराग्रह और न ही वैचारिक स्तर पर कोई पूर्वाग्रह। वे केवल जीवन देखते हैं और देखते हैं मानवीय चेतना की हर संभावित ऊँचाई को।

पूज्यप्रवर अपने उद्बोधनों के माध्यम से केवल राह ही नहीं दिखाते, बल्कि राह की कठिनाइयों और अड़चनों से भी वाकिफ़ कराते हैं। उनकी प्रेरणा लक्ष्य-निर्धारण के बाद पुरुषार्थ तक ही सीमित नहीं है, बल्कि वे हर उस आयाम को हमें सौंपना चाहते हैं, जो हमें मंज़िल के और करीब ले जाने के लिए सुगमता दे। प्रथम चरण में वे कहते हैं कि व्यक्ति अपने मन के बोझ को उतार फेंके।

बोझिल मन से किया गया काम और जिया गया जीवन भला किस काम का ! सुखी जीवन का स्वामी तो वही है जो अपने चित्त में किसी तरह का बोझ नहीं रखता, शांत, निश्चिंत और हर हाल में मस्त रहता है।

शांति जीवन का सबसे बड़ा वैभव है। जिसके जीवन में शांति नहीं है, वह अकूत खजाने का मालिक होकर भी खिन्न और दुःखी है। इस शांति को पाने के लिए लोग क्या-क्या नहीं करते, फिर भी वह नसीब नहीं होती, पर पूज्यश्री एक ऐसी कीमिया दवा सुझाते हैं, जो कभी बेकार नहीं जाती और वह है—प्रतिक्रियाओं से परहेज़। वे कहते हैं कि क्रियाओं का होना स्वाभाविक है, किंतु प्रतिक्रियाओं का होना आत्मनियंत्रण का अभाव है। ज़ो अपने पर काबू नहीं रख सकते, वे ही बात-बेबात में व्यर्थ की प्रतिक्रियाएँ करते रहते हैं। जो अपने जीवन में इस बात का बोध बनाये रखता है कि मैं क्रिया-प्रतिक्रिया के भँवर-जाल में नहीं उलझूँगा, वही अपने जीवन में शांति और आनंद को बरकरार रख पाएगा।

जीवन की सफलताओं में स्वस्थ-सुंदर शरीर की अपेक्षा स्वस्थ-सुंदर मन की भूमिका कहीं अधिक होती है। जिसका मन रुग्ण है, उसकी सोच भी रुग्ण और विकृत होती है। ऐसा व्यक्ति अपने जीवन को नरक बना डालता है। पूज्यश्री कहते हैं कि मनुष्य सोच सकता है, इसीलिए वह मनुष्य है। इससे भी बढ़कर बात यह है कि सोच ही मनुष्य है। मनुष्य की सत्ता से यदि सोचने-समझने की क्षमता को अलग कर दिया जाए तो धरती पर मनुष्य की सत्ता का कोई अर्थ ही नहीं रहेगा, वह एक निर्बल असहाय दोपाया जानवर भर रह जाएगा। व्यक्ति जो भी सोचे, स्वस्थ-सुंदर सोचे; हर बिंदु पर समग्रता और सकारात्मकता से सोचे।

आदमी का जीवन को देखने का नजरिया अत्यंत नकारात्मक है। नकारात्मकता के विष के कारण उसका जीवन तनाव-अवसाद से घिर गया है। इससे उबरने का एकमात्र उपाय सकारात्मकता को अंगीकार करना है। पूज्यश्री की नज़रों में यह सर्वकल्याणकारी मंत्र है, जो कभी निष्फल नहीं होता। सकारात्मकता से बढ़कर कोई पुण्य नहीं और नकारात्मकता से बढ़कर कोई पाप नहीं होता। सकारात्मक जीवन-दृष्टि के साथ किया गया पुरुषार्थ निश्चय ही व्यक्ति को लक्ष्य के और करीब ले जाता है। आपको अपनी मंजिल हासिल हो, यही कामना है। बस, लक्ष्य को अपनी आँखों में बसाये रखें और प्रतिपल पुरुषार्थ को प्रेरित करती प्रभुश्री की ओजस्वी वाणी को हर-हमेश हृदय में हिलोरें लेने दें।

—सोहन

अनुक्रम

१. लक्ष्य बनाएँ, पुरुषार्थ जगाएँ १

२. मन के बोझ उतारें १४

३. औरों का दिल जीतें २८

४. प्रतिक्रियाओं से परहेज रखें ४१

५. भय का भूत भगाएँ ५४

६. स्वस्थ सोच के स्वामी बनें ६९

७. जीवन-दृष्टि सकारात्मक बनाएँ ८२

लक्ष्य बनाएँ, पुरुषार्थ जगाएँ

जिस तरह कोई राहगीर समुद्र के किनारे बैठकर समन्दर की लहरों को देखता है, उसी तरह मैं भी जीवन के किनारे बैठकर जीवन को निहारा करता हूँ। जीवन चाहे मेरा हो या किसी और का, जीवन तो जीवन ही होता है। हर जीवन के साथ एक जैसी ही प्राणधारा अनुस्यूत होती है। सभी व्यक्ति जीवन के तयशुदा रास्तों से गुजरते हैं। जिस रास्ते से महावीर और बुद्ध, राम और रहीम, मीरां और मंसूर गुजरे थे, उसी रास्ते से हम भी गुजर रहे हैं। आइंस्टीन और एडीसन, शेक्सपियर और मैक्समूलर, नोबल और नेल्शन भी आखिर हम में से ही पैदा हुए लोग हैं। जैसे माँ की कोख से हम पैदा हुए थे, वैसे ही वे पैदा हुए। जैसे हम खाते हैं, संसार भोगते हैं और मर जाते हैं, ऐसे ही उनके जीवन में घटित हुआ था। आखिर उनके और हमारे जीवन में अन्तर क्या है? उनका एक लक्ष्य था, जीवन की सुनिश्चित राह।

प्रकृति देती है प्रतिफल

हमारे तो सर्वांग सम्पन्न हैं, मैं उन लोगों को देख रहा हूँ जो शरीर से अपूर्ण/अपाहिज होते हुए भी सफलता की ऊँचाइयों तक पहुँचे और उन्होंने जीवन का भरपूर परिणाम पाया। प्रकृति के द्वारा दिये गये अभावों के बावजूद जो ऊँचाइयों तक पहुँचे, वे ही तो धरती पर शिखर-पुरुष कहलाते हैं। सूरदास नेत्रहीन थे, पर

उनकी काव्य-प्रतिभा की सारी मानवता कायल है । प्रसिद्ध विद्वान् डॉ. रघुवंश सहाय वर्मा हाथ से लाचार थे, वह पैर से लेखन-कार्य करते थे । क्या यह उदाहरण हमारी सोयी चेतना को जगाने के लिए पर्याप्त नहीं है ? जब कभी हेलन केलर को पढ़ता हूँ, तो हृदय इस बात से अभिभूत हो जाता है कि एक गूंगी-बहरी-अंधी, यद्यपि इस शब्द-प्रयोग के लिए मैं क्षमा चाहता हूँ, क्या जीवन की इतनी पारदर्शी गहराइयों तक उतर सकती है !

जीवन का क्षेत्र अत्यन्त विस्तीर्ण है और कार्य करने को अनन्त । यदि हम किसी भी वस्तु की प्राप्ति की आकांक्षा अपने संपूर्ण मन से करें, और उसे प्राप्त करने के लिए निरन्तर प्रयास और संघर्ष करते रहें, तो प्रकृति हमें सफलता वैसे ही दे देती है; जैसे सूरज से चली किरण और बादल से बरसी बूँद हम तक पहुँच ही जाती है ।

जो लोग अपने जीवन में एक लक्ष्य को बनाकर जीवन के रास्तों से गुज़रते हैं, वे अपनी मंजिलों को मकसूद कर ही लेते हैं जो लोग लक्ष्यहीन जीवन जीते हैं, वे संसार की इस पाठशाला में पढ़ने के लिए फिर भेज दिए जाते हैं । आखिर जो यहाँ नहीं चला, वह और कहीं चल पाए कम सम्भव है । जो जीवन के रास्ते से गुज़रकर जीवन से मुक्त हो जाते हैं, वे सिद्धि और सफलता को प्राप्त कर लेते हैं । जो लोग जीवन के रास्तों से गुज़रकर भी जीवन के पाठों को पढ़ नहीं पाते, वे संसार की पाठशाला में फिर-फिर लौटा दिए जाते हैं । किसी बैरंग लिफाफे की तरह मनुष्य के पुनर्जन्म की यही कहानी है ।

लक्ष्य बसाएँ आँखों में

जिस आदमी की ज़िंदगी में उसे अपना लक्ष्य नज़र आता है, वह व्यक्ति अपने जीवन की अंतिम साँस तक का उपयोग कर जाता है । जिस आदमी के जीवन का कोई लक्ष्य नहीं होता, वह आदमी न तो जी रहा है और न ही वह मर रहा है । उस आदमी की स्थिति बिलकुल ऐसी ही हो जाती है कि जैसे किसी आदमी को तरल ऑक्सीजन में गिरा दिया जाए । तरलता आदमी को जीने नहीं देती और ऑक्सीजन आदमी को मरने नहीं देती । ऐसी स्थिति हर किसी की है । व्यक्ति इसलिए जी रहा है, क्योंकि मौत अभी तक आई नहीं है । ऐसा व्यक्ति अपनी ज़िंदगी में कभी कुछ नहीं कर सकता ।

दुनिया ऐसे लोगों से भरी पड़ी है जो जीवन को केवल भोग की वस्तु समझते हैं या जिन्हें ज़िंदगी के नाम पर केवल मौत ही दिखाई देती है । जो आदमी मौत से भयभीत रहता है, वह अपनी जिंदगी का सही उपयोग नहीं कर सकता ।

जीवन के द्वार पर खड़े होकर अपने जीवन के लक्ष्य का निर्धारण वही कर सकता है, जिसे अपने जीवन की मुंडेर पर जीवन का जलता हुआ चिराग नज़र आता है । वह व्यक्ति कभी पुरुषार्थ नहीं कर सकता, जिसे हर ओर अँधेरा ही नज़र आता है । कोई भी व्यक्ति अपने जीवन में किसी भी लक्ष्य का निर्धारण इसलिए नहीं कर पाता है, क्योंकि उसका नज़रिया निराशावादी है, उसे आशा की कोई किरण नज़र नहीं आती । निराशा और मायूसी में घिरे व्यक्ति का चेहरा देखने लायक होता है । बुझा-बुझा निस्तेज चेहरा, आँखें अंदर धँसी हुई, हँसी-मुस्कान से दूर-दूर का रिश्ता नहीं । आदमी का चेहरा तो हमेशा गुलाब के फूल की तरह खिला-खिला रहे, महकता रहे । निराशा को गले में लटकाए रखने वाले व्यक्ति अकर्मण्य हो जाते हैं, निष्क्रिय हो जाते हैं ।

नाकामयाबी का खौफ़ आदमी के मन में गहराई तक उतरा हुआ है । उसे लगता है कि उसे अपने काम में असफलता ही हाथ लगेगी, इसलिए वह कुछ नहीं करता । हकीकत तो यह है कि सफलता का रास्ता तब ही पार होता है, जब व्यक्ति सफलता-विफलता का आंशिक भाव भी मन में लाए बगैर निष्ठाभाव से कार्य में जुटा रहता है । हर असफलता व्यक्ति को सफलता के मार्ग पर ही अग्रसर करती है । जो आदमी तालाब में उतरना चाहता है, लेकिन डूबने के डर से भयग्रस्त रहेगा, वह आदमी कभी तैरना नहीं सीख पाएगा । तैरना सीखने के लिए तो तुम्हें मन से डूबने का खौफ़ निकालना होगा । जो आदमी डूबने के डर से कतराते हैं, वे सौ फीसदी डूबे हुए रह जाते हैं ।

इच्छा-शक्ति का बिगुल बजाएँ

आदमी अपने जीवन में लक्ष्य का निर्धारण नहीं कर पाता, क्योंकि आदमी की इच्छा-शक्ति और आत्म-विश्वास बड़ा कमजोर है । मनुष्य के जीवन में पलने वाली उसकी इच्छा-शक्ति तो उसके जीवन की मूल प्रेरक बनती है । वही तो उसके जीवन का मूल प्रोत्साहन बन पाती है । जिसके जीवन में संकल्प-शक्ति और इच्छा-शक्ति सुदृढ़ और प्रबल है, वह व्यक्ति हर कठिनाई से लड़ सकता है । ऐसा

ही एक व्यक्ति था—नेपोलियन। नेपोलियन कहता था कि उसके शब्द-कोष में 'असंभव' नाम का कोई शब्द नहीं है। इसी हौंसले के बल पर वह दुर्गम घाटियों को पल भर में पार कर जाता था।

ऐसे ही एक और महानुभाव थे—सुकरात। एक बार सुकरात सरोवर में स्नान कर रहे थे। सुकरात से एक युवक ने पूछा—'महाशय, क्या तुम यह बताओगे कि ज़िंदगी में सफल होने का राज़ क्या है?' युवक सुकरात तक पहुँच चुका था। उसने झट से युवक को पकड़ा और पानी में डूबो दिया। वह आदमी छटपटाने लगा। सुकरात ने अपनी सारी ताकत लगाकर उसे दबाये रखा, मगर युवक की सहन-क्षमता जवाब दे गई। उसने पूरी ताकत लगाकर सुकरात को एक तरफ धकेल दिया। वह तालाब से बाहर की ओर भागा।

बाहर निकलकर युवक ने सुकरात से कहा—'तुम्हारी यह बदतमीजी अक्षम्य है, सुकरात।' सुकरात ने हँसते हुए कहा—'तुम अपने प्रश्न का समाधान भी चाहते हो और मरने से भी डरते हो। तुम ज़रा बताओ कि जब मैंने तुम्हें पानी में डुबोया तो तुम्हारी अन्तिम इच्छा क्या थी?' युवक ने कहा—'तब मेरी एकमात्र इच्छा जीने की थी।' सुकरात ने तब कहा—'सफलता के लिए इससे बड़ा और कोई मंत्र नहीं होता है, जहाँ आदमी के पास केवल एक ही इच्छा बच जाए और वह इच्छा जीने की इच्छा हो।

इच्छा-शक्ति और आत्म-विश्वास के बल पर ही लक्ष्यों को पाया जा सकता है। आत्म-विश्वास से ही बड़ी-से-बड़ी चट्टानों को भी हटाया जा सकता है और अपनी ज़िंदगी की हर पराजय को विजय में बदला जा सकता है। ध्यान रखें, जीवन में वे जरूर जीतेंगे, जिनके भीतर जीत जाने का पूरा विश्वास है।

आदमी अपना लक्ष्य निर्धारित नहीं कर पाता, क्योंकि उसका स्वाभिमान बड़ा कमजोर है। आदमी में कभी भी अपने आप पर आत्म-गौरव करने का भाव ही नहीं उठता। आपने शायद धर्म की किताबों में इसे अहंकार के रूप में पाया है, पर मैं कहता हूँ कि आदमी कभी-कभी अपने आप पर भी गौरव करना सीखे कि ईश्वर ने मुझे इस जीवन के नाम पर कितनी बड़ी महान् सौगात प्रदान की है।

सदा अपने आप पर गौरव करो। कभी भी अपने आपको दीन-हीन और गरीब मत समझो। स्वयं को हमेशा करोड़पति समझो। हमारी आँखें, हृदय, गुर्दे

और अन्य अंगों की कीमत बाजार में करोड़ों में है । फिर किस बात की हीनता, किस बात का डर ! अपने कमजोर स्वाभिमान को उठाकर किनारे फेंको, अपने हृदय की तुच्छ दुर्बलता को किनारे कर दो । बस, अपने आप पर आत्म-गौरव करो । गौरव इसलिए करो, ताकि तुम हर समय उत्साह-उमंग-ऊर्जा से ओत-प्रोत रह सको ।

टालमटोल की आदल टालें

आदमी में टालमटोल करने की भी बुरी आदत होती है । वह हर काम को कल पर टालने का आदी है । वह तो मौका ढूँढ़ता है । सोचता है, 'आज करे सो काल कर और काल करे सो परसों ।' ऐसा करके केवल काम को ही कल पर नहीं टाल रहे, आज को भी कल पर टाल रहे हो । यह कौन-सी गारंटी है कि कल का दिन भी आएगा । आज का कार्य आज ही संपन्न हो । अगर कल पर टालना ही है तो अपने अशुभ भावों को, अपने क्रोध को, अपने द्वेष-दौर्यनस्य को कल पर टालिए और प्रेम, सहानुभूति, करुणा, शांति के कामों को आज ही कर डालिए ।

शुभ कार्यों को करने के लिए किसी मुहूर्त की जरूरत नहीं होती । मुहूर्त निकलवाना है तो अशुभ कार्यों के लिए निकाला जाए । अगर गुस्सा आ जाए तो उसी क्षण किसी संत और मुनि के पास जाना और कहना कि मैं गुस्सा करना चाहता हूँ, इसलिए कोई ऐसा मुहूर्त निकाल दीजिए कि मैं गुस्सा कर पाऊँ । अगर किसी से प्रेम करना हो तो किसी मुहूर्त की जरूरत नहीं है । अगर तुम कालसर्पयोग में भी प्रेम कर लोगे तो वह 'अमृत-सिद्धि' योग हो जाएगा । अगर शुभ कार्य को अशुभ समय में करो तो भी कल्याण होगा और अशुभ कार्य को शुभ समय में करो तो भी अकल्याण होगा । शुभ आज करेंगे, अशुभ को कल पर टालेंगे ।

बिना लक्ष्य का जीवन कैसा

हर आदमी अपने आप में निरुद्देश्य जीवन जी रहा है । चारों ओर भागमभाग है । हर आदमी भाग रहा है, सारी दुनिया दौड़ रही है । करोड़पति भी दौड़ रहा है और रोड़पति भी । पैसा जिंदगी का रास्ता हो सकता है, लेकिन मंजिल नहीं; साधन हो सकता है, साध्य नहीं । नतीजतन आदमी की जिंदगी धोबी के गधे-सी हो गई है, घर से घाट और घाट से घर के बीच ही जिंदगी गुजर जाती है इंसान दस मिनट के लिए बैठे और अपने जीवन के उद्देश्य के बारे में विचार करे

परिवार की एक आधार-स्तंभ नारी भी उद्देश्यहीन जीवन जीती है । सुबह उठते ही मकान में झाड़ू-पौंछे लगाना, बच्चों को स्कूल के लिए तैयार करना, पति को दुकान भेजना, दिन में खाना बनाना, गेहूँ बीनना, शाम को फिर पति की सेवा करना, बस इसी में सिमट कर रह गया है नारी-जीवन । पुरुष भी उसी तरह मायाजाल में उलझा है । व्यक्ति का जीवन निरुद्देश्य-लक्ष्यहीन हो गया है ।

बगैर लक्ष्य का जीवन तो पशु-तुल्य है । पशु भी हमारी ही तरह पैदा होते हैं, पेट भरते हैं, बच्चे पैदा करते हैं और एक दिन देह छोड़ जाते हैं । फिर हममें और पशु में फर्क क्या रहा ? आदमी का जीवन पशु की तरह ही हो गया है । जिस शिक्षा को पशुता को कम करना चाहिए था, वह भी दिशाहीन हो गई है । शिक्षा मनुष्य को जीने की कला सिखाती है, अन्तर्-दृष्टि देती है, लेकिन वह शिक्षा रोजी-रोटी कमाने तक ही सीमित हो चुकी है । आज की शिक्षा एम.ए. बना देती है, एम.ए.एन. नहीं बना पाती । आदमी को आदमी बना दे, इसी में शिक्षा की अर्थवत्ता है ।

शिक्षा कमाने के लिए ही न हो । एक अनपढ़ मजदूर भी अपना पेट पाल लेता है और एक बुद्धिहीन जानवर भी अपना पेट भर लेता है । इंसान कुछ पल के लिए शांत-चित्त होकर सोचे कि क्या पेट भरना और पेट भरने के लिए दिन-रात जुटे रहना ही जीवन का उद्देश्य है ? निरर्थक जीवन मत जीओ, अपने जीवन में कुछ सृजन करो, धरती को थोड़ा प्रमुदित करो, अपनी ओर से कुछ फूल खिलाओ । कविता के छंदों की तरह लयबद्ध होओ, संगीत जैसा अपने आपको स्वरूप दो ।

शिक्षा को हमने रोजगार के साथ जोड़ा है, जीवन के साथ नहीं जोड़ा । शिक्षा जीवन के साथ जुड़े और आदमी को यह समझ दे कि उसके जीवन का कोई लक्ष्य है । बगैर लक्ष्य का जीवन जीओगे तो वह भारभूत हो जाएगा । आप ज़रा सोचें कि ईश्वर ने आपको पूरे सौ वर्ष की जिंदगी दी है । क्या सौ साल की जिंदगी भी अपर्याप्त है ? आप अपनी जिंदगी में जीते-जी ऐसे इंतजाम कर लें कि मौत जिंदगी के द्वार पर आ खड़ी हो, तो कोई शिकवा न रहे ।

केन्द्रीकरण हो शक्ति का

जिंदगी का पूरा-पूरा उपयोग हो । उसके हर अंश का, हर कतरे का । हम मरने के लिए नहीं जी रहे हैं, जीने के लिए जी रहे हैं । जीवन कभी भी क्षणभंगुर

नहीं होता, क्षणभंगुर तो मौत होती है । मौत क्षण में आती है और क्षण में चली जाती है । जीवन कभी भी क्षण में नहीं आता, न क्षण में जाता है । जो क्षणभंगुर है, उस पर तो हम अपना इतना ध्यान केंद्रित कर रहे हैं और जिसे हमें पूरे सौ वर्ष जीना होता है, उसके लिए हम पूरी तरह से लापरवाह बने हुए हैं । जीवन में लक्ष्य का निर्धारण करो । अपनी असली संतुष्टि और तृप्ति तब मानना जब तुम्हारे हर दिन लक्ष्य की पूर्ति होती चली जाए और तुम हर दिन को यह मानो कि लक्ष्य की तरफ हमारे कदम आगे बढ़ चुके हैं ।

हम बचपन में खेला करते थे । माँ जिस आईने को देखकर अपना चेहरा सँवारा करती थी, हम उसे लेकर दोपहर में धूप में बैठ जाते और किसी कागज पर उसकी किरणें केंद्रित करते । तुम भी अपनी जिंदगी के सारे पुरुषार्थों को अगर कहीं एक जगह पर केंद्रित कर दो तो तुम पाओगे कि जीवन रोशन हो चुका है । ऐसे ही तुम अपने जीवन की ऊर्जा को कहीं भी केंद्रित कर दो तो वह ऊर्जा तुम्हारे जीवन के लिए चमत्कार साबित हो जाएगी । वह ऊर्जा मस्तिष्क में केंद्रित हो जाए तो तुम्हारा मस्तिष्क प्रखर हो जाएगा और तुम्हारे शरीर में किसी दर्द वाले स्थान पर केंद्रित हो जाए तो उस स्थान की रेकी जो जाएगी, उपचार हो जाएगा ।

जीवन की ऊर्जा को अगर केंद्रित करना आ जाए तो वह ऊर्जा अद्भुत परिणाम देती है । जिंदगी का अगर एक लक्ष्य बना दो, तो जीवन का चिराग रोशन हो उठेगा । आप रेलवे स्टेशन पर जाते हैं, तो क्या किसी ऐसी ट्रेन पर सवार होना चाहेंगे, जिसके गन्तव्य का कोई पता न हो ? जब बिना मंजिल की ट्रेन में आप सवार नहीं होना चाहते हैं, तो आपने जिंदगी की गाड़ी को ऐसी पटरी पर क्यों डाल रखा है जिसका कोई लक्ष्य नहीं है । जिंदगी का एक सुनिश्चित लक्ष्य हो ।

कर्मक्षेत्र के अर्जुन हों

कहते हैं, गुरु द्रोणाचार्य छात्रों को तीरंदाजी का प्रशिक्षण दे रहे थे । कौरव और पाण्डव सारे एकत्र थे । पेड़ पर एक चिड़िया टंगी हुई थी । सभी से कहा गया उन्हें चिड़िया पर निशाना लगाना है । एक-एक करके विद्यार्थी आते । उन्हें सबसे पहले एक प्रश्न पूछा जाता कि उन्हें क्या दिखाई दे रहा है ? कोई कहता कि उन्हें पेड़ दिखाई दे रहा है, कोई कहता कि चिड़िया दिखाई दे रही है, कोई कहता कि दूर क्षितिज तक सारे दृश्य दिखाई दे रहे हैं । उन सबको निशाना लगाने का मौका दिये

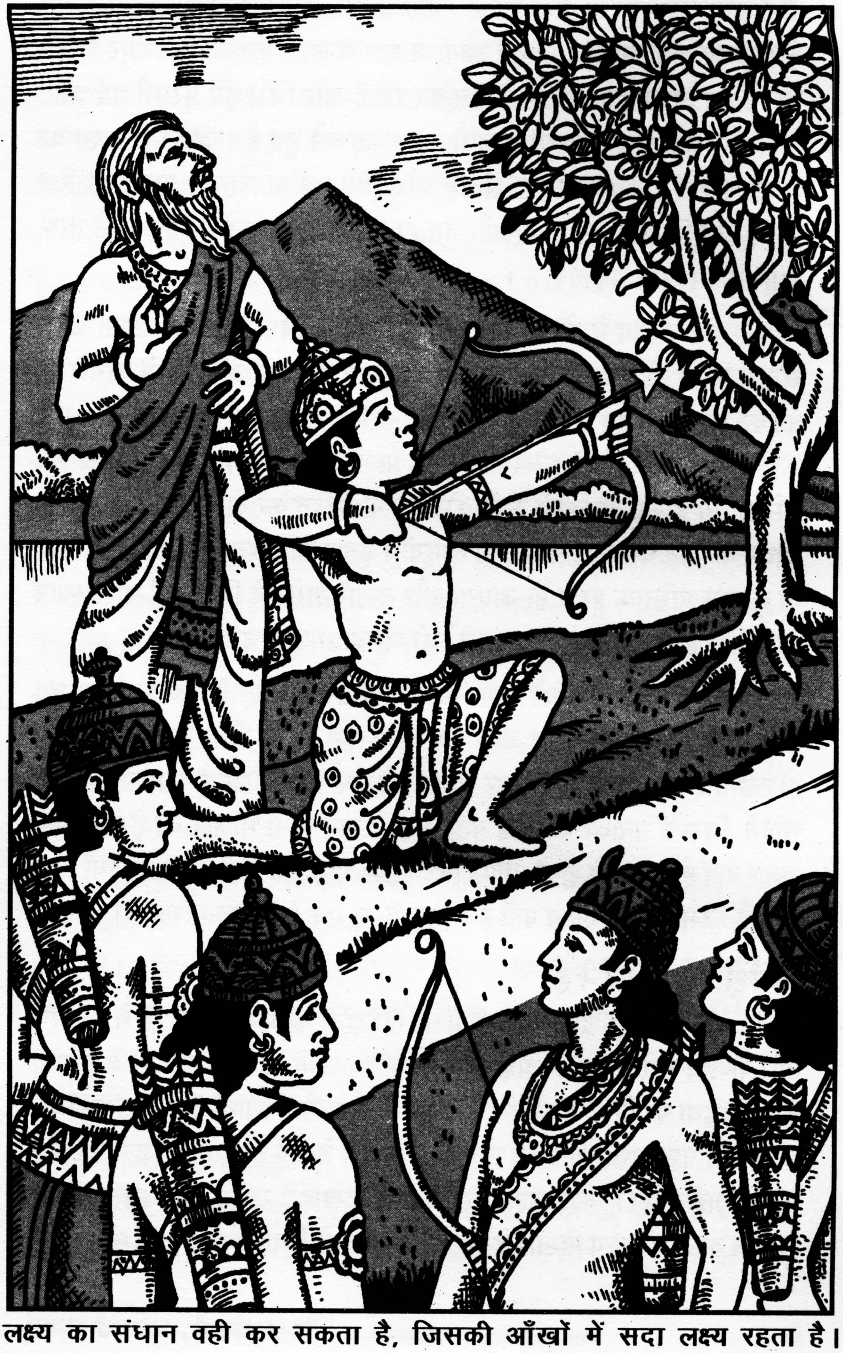

लक्ष्य का संधान वही कर सकता है, जिसकी आँखों में सदा लक्ष्य रहता है।

बिना अलग खड़ा कर दिया जाता। एक-एक करके सारे शिष्य आते हैं, लेकिन सभी किनारे खड़े होते चले जाते हैं।

युधिष्ठिर आता है। उससे भी यही प्रश्न किया जाता है। युधिष्ठिर कहता है—मुझे चिड़िया दिखाई देती है। द्रोणाचार्य उसे भी एक तरफ खड़े होने का संकेत करते हैं। जब अर्जुन आता है तो उससे भी यही प्रश्न किया जाता है। अर्जुन कहता है—मुझे चिड़िया की केवल आँख दिखाई देती है। गुरु द्रोण उसकी पीठ थपथपाते हैं और कहते हैं—'तीर चलाओ।' लक्ष्य का संधान वही कर सकता है जिसकी आँखों में सदा लक्ष्य रहता है।

लक्ष्य को आँखों में बसाकर ही अर्जुन ने कभी चिड़िया की आँख को तो कभी मछली की आँख को बेधने में सफलता पाई थी। क्षेत्र चाहे व्यवसाय का हो या साधना का, शिक्षा का हो या संस्कार का, विकास का हो या विज्ञान का, दृष्टि लक्ष्य पर हो, तो लक्ष्य अवश्य सिद्ध होगा, आपके जीवन में सफलता का सूर्योदय अवश्य होगा। आखिर आप भी अपने कर्म-क्षेत्र के अर्जुन हैं। जिन तत्त्वों को अपनाकर अर्जुन सफल हुए या दुनिया के अन्य महानुभाव जीवन और जगत के क्षेत्र में हर ओर विजयी हुए, तो आप और हम क्यों नहीं हो सकते। लक्ष्य बनाएँ, पुरुषार्थ जगाएँ। हमारे कर्त्तव्य हमें किसी देवदूत की तरह आमंत्रित कर रहे हैं। कह रहे हैं जागो मेरे पार्थ! अपने कर्त्तव्य के लिए सन्नद्ध हो जाओ, अपने लक्ष्य को साधे बिना विश्राम मत लो, मैं तुम्हारे साथ हूँ। क्या हम इस चुनौती को स्वीकार करने के लिए तैयार हैं?

संकल्प हों सुदृढ़

ध्यान रखो, अपनी जिंदगी में कोई लक्ष्य बनाओ तो उस पर दृढ़ रहो। निश्चय सुदृढ़ है, तो सफलता भी निश्चित है। निश्चय इतना दृढ़ हो कि जब तक हमारा संकल्प, हमारा लक्ष्य पूरा न होगा, हम चैन की साँस न लेंगे। आप अपने संकल्प को बार-बार दोहराएँ। ऊँचे स्वर में प्रतिज्ञा करें कि हाँ, मैं अपने संकल्प को हर हाल में पूरा करूँगा। अगर/मगर की बात न उठाएँ। दृढ़ता और निश्चय की बात करें। एक सफल अभिनेता से जब पूछा गया कि अगर आप अभिनेता न होते, तो क्या होते? अभिनेता ने कहा, 'ऐसा हो ही नहीं सकता था। मुझे अभिनेता ही होना था, सो मैं अभिनेता हूँ।' क्या हममें यह निश्चय-शक्ति है? अगर ऐसा है,

तो नतीजा यह निकलेगा कि आपकी असफलताएँ भी आपको सफलता के करीब पहुँचाएँगी ।

कार्य-योजना हो सुव्यवस्थित

दृढ़ निश्चय के साथ ही लक्ष्य को अर्जित करने की निश्चित कार्य-योजना हो । निश्चित कार्य-योजना के अभाव में कोई भी सेनापति युद्ध नहीं जीत सकता, कोई भी लेखक व्यवस्थित रचना नहीं लिख सकता; कोई भी व्यवसायी उत्साहजनक परिणाम नहीं पा सकता । कार्य की एक सुनिश्चित योजना होनी चाहिए ।

कार्य-योजना क्या और कैसे होती है, यह एक सज्जन से बखूबी जाना जा सकता है, वे हैं श्री प्रकाश दफ्तरी । मैं उनके कर्मयोग को देखकर बहुत चकित होता था । वे दिन भर में पचासों काम निपटा लेते थे । मैं उनकी कार्य-शैली से बहुत प्रभावित हुआ । मैंने जानना चाहा तो पता चला कि वे दिन भर में जो भी काम करते, उनकी सुबह फहरिश्त बना लेते हैं । दिन भर का सारा कार्य उसी फहरिश्त के अनुसार होता था । वे जब शाम को घर लौटते तो उनका एक भी कार्य बकाया नहीं रहता । उनको अगर 'शेविंग' करनी होती, तो वह भी उस 'लिस्ट' का हिस्सा होती । आप अपने जीवन में कितने कार्य एक दिन में निपटा पाते हैं ? आपके कार्यों में तारतम्य नहीं है, क्योंकि कार्यों में व्यवस्था नहीं है, कार्य-योजना नहीं है ।

जीवन के पचासों कामों को निबटाने के लिए एक दिन ही पर्याप्त है, बशर्ते हमारे पास एक सुनिश्चित कार्य-योजना हो । ऐसे तो आपको चार कार्य भी याद नहीं रहते, लेकिन योजना बन जाए तो आप जितने काम निबटाते हैं, उनके बारे में जानकर आपको स्वयं को ताज्जुब होगा । जब आप रात को सोएँगे तो उससे पहले कोई भी कार्य शेष नहीं रहेगा ।

कार्य करें निष्ठा से

जब हम कार्य-योजना बना लें तो मनोयोगपूर्वक, लगनपूर्वक उस कार्य को पूरा करने में लग जाएँ । ऐसा नहीं कि निट्ठले बैठे रहें । हमारे यहाँ कमी रहती है, तो बस यही कि हम योजनाएँ लम्बी-चौड़ी बना लेते हैं, लेकिन उनको पूरा करने के प्रति कोई चेष्टा नहीं करते । निकम्मे बैठे रहते हैं और कहते हैं कि हम व्यस्त हैं । निकम्मेपन का त्याग हो जाए, यही तो गीता का संदेश है । कोई भी व्यक्ति

लगनपूर्वक अपने कार्य को संपन्न करता है तो यह सुनिश्चित है कि अगर वह गरीब है, तो उसे अमीर बनते देर नहीं लगती, मंजिल आगे बढ़कर उसके कदम चूमती है ।

कुछ दिन पहले ही मैंने समस्त समाज से कहा था कि अगर आप समाज के किसी भी कार्य को पूरा करने के लिए कदम बढ़ाएँ तो हमारा पूरा-पूरा सहयोग मिलेगा । वह कार्य किसी मंदिर, विद्यालय, चिकित्सा-केन्द्र या सराय के निर्माण का हो सकता है या और कोई जिससे पूरे समाज का हित सधता हो । लोग करने के नाम पर बस राजनीति करते हैं । समाज को आपकी नेतागिरी की नहीं, निष्ठापूर्ण कार्यों की जरूरत है । समाज चाहता है कि तुम काम करो, कुछ रचनात्मक काम करो, कुछ बनाओ । जो बना नहीं पाता, वह बिगाड़ता ही है । जो सृजन नहीं कर पाता, वह विध्वंस ही करता है । इस मानवीय प्रवृत्ति पर विजय पाएँ और दत्तचित्त होकर काम में लग जाएँ ।

कल ही मैं एक मंदिर में गया था । वहाँ के कर्त्ताधर्ता ने बताया कि मंदिर का जीर्णोद्धार कराया जायेगा, जिसमें फलां सुधार होगा, फलां निर्माण होगा । मैंने कहा—'होगा' में कुछ नहीं होगा, क्यों न तुम कार्य की शुरुआत आज से ही करवा दो । ऐसा सुनते ही वह बगलें झाँकने लगा । दुनिया में बातों के बादशाह बहुत होते हैं, आचरण के आचार्य कम । लोगों को करना-धरना कुछ नहीं, केवल बातें करेंगे । मनोयोगपूर्वक तुम लग जाओ तो सारी सृष्टि तुम्हारे सहयोग के लिए तैयार रहेगी ।

थॉमस अल्वा एडीसन ने बल्ब का आविष्कार किया था । वह अपने प्रयोग के दौरान हजारों बार असफल रहा । उसके सभी साथी उसे छोड़ गए, फिर भी उसने हिम्मत नहीं हारी । वह अपने काम में, पुरुषार्थ में जुटा रहा और आखिर उसने अपने लक्ष्य को पा ही लिया और तब सारा संसार बल्ब की रोशनी से नहा उठा । केवल मनोयोग चाहिए, लगन चाहिए सितारों को तोड़ लाने के लिए । लक्ष्य बनाएँ, पुरुषार्थ जगाएँ, मंजिल आपके कदमों में होगी ।

पुरुषार्थ हो निरन्तर

यदि हम अपने लक्ष्य के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहेंगे, तो लक्ष्य को सिद्ध करने से कोई रोक नहीं सकता । भले ही कोई अपनी असफलता के लिए किस्मत

को दोष देता फिरे, पर हकीकत यह है कि किस्मत भी उसी का साथ निभाती है जो पुरुषार्थशील होते हैं । चर्चित पद है—

रसरी आवत जात है,
सिल पर पड़त निशान ।
करत-करत अभ्यास के,
जड़मति होत सुजान ॥

अगर निरन्तरता बनी रहे, प्रयत्न जारी रहे, तो पत्थर भी घिस जाता है, काम करने का तरीका आता हो, तो पत्थर कला का नायाब नमूना हो सकता है, वह किसी महापुरुष को प्रतिबिम्बित कर सके, ऐसी प्रतिमा बन सकता है । हम कुनकुने प्रयासों की बजाय, स्वयं को लक्ष्य के लिए समग्रता से लगाएँ । लक्ष्य-सिद्धि के लिए एक ही बात चाहिए और वह चाहिए—समग्रता '

धीरज धरो : विश्वास करो

सम्भव है सफलता पहले पुरुषार्थ में न मिले, पर इससे अधीर होने की आवश्यकता नहीं है । हम धैर्य रखें । आखिर, दुनिया में कोई भी चीज मुफ्त में नहीं मिलती और उस उपलब्धि का मूल्य ही क्या, जो बिना श्रम के मिल जाए । आदमी का असफल होना स्वाभाविक है, आखिर गिरता वही है जो चला करता है । पर जो गिरकर भी फिर उठ खड़ा हो आए और फिर सुदृढ़ता से चलना शुरू कर दे, वह शिखर तक पहुँच ही जाता है ।

धीरे-धीरे रे मना,
धीरे सब कुछ होय ।
माली सींचै सौ घड़ा,
रितु आय फल होय ॥

तुम केवल सिंचन को मूल्य दो । फल देना प्रकृति का काम है । तुम प्रकृति की व्यवस्थाओं में भी कुछ तो निष्ठा रखो । अधीर लोग ही निराश होते हैं और निराशा पुरुषार्थ की दुश्मन है । लक्ष्य + योजना + निरन्तर प्रयास—ये तीन सूत्र हैं सफलता के लिए और साथ में चाहिए दो विशेष सम्बल । वे हैं धैर्य + आत्मविश्वास । ये पाँच मंत्र हैं जिसके हाथ में, सफलता है उसके साथ में ।

आप यदि अपने आपको असफल देख रहे हैं, तो यह तय है कि हमने

अभी तक अपनी सफलता के लिए पच्चीस फीसदी ताकत ही लगाई है। शत प्रतिशत शक्ति लगा दें, तो सफलता आपके हाथ में होगी। अब तक जो सफल हुए, वे समग्रता से सन्नद्ध हो जाने के कारण ही हुए। जो चीज औरों के साथ हो सकती है, वही हमारे साथ भी क्यों नहीं हो सकती।

भगवान् कहते हैं जागो मेरे पार्थ ! तुम्हारे कर्त्तव्य तुम्हें आमंत्रित कर रहे हैं। तुम कदम उठाकर तो देखो, आकाश की ओर छलांग लगाकर तो देखो, चाँद तुम्हारी हथेली में होगा। शिखरों पर तुम्हारे पद-चिह्न होंगे—आने वाली पीढ़ी के लिए, फिर से किसी को प्रेरणा देने के लिए, ऊँचाइयों को पाने के लिए।

○○○

मन के बोझ उतारें

जीवन मनुष्य के लिए एक बेशकीमती सौगात है। जीवन के सामने दुनिया भर की संपदाएँ तुच्छ और नगण्य हैं। व्यक्ति भले ही परम पिता परमेश्वर की आराधना कर उनसे कोई वरदान पाना चाहे, लेकिन यह वरदान तो उसे जीवन के रूप में पहले से ही हासिल है। जीवन ! अपने आप में ही वरदान है। जीवन से बढ़कर कोई उपहार या पुरस्कार भला क्या होगा !

जो व्यक्ति अपने आपको दीन-हीन मान बैठा है वह प्रकृति की एक महान् सौगात को नज़र अंदाज़ कर रहा है। दीन-हीन क्यों हो मनुष्य ! उसे तो इतना अमूल्य जीवन मिला हुआ है कि उसका दर्जा किसी भी अति साधन-संपन्न व्यक्ति से कम नहीं हो सकता। वह ज़रा अपने एक-एक अंग की कीमत आँके। उसकी आँखें, उसका दिल, उसके गुर्दे—क्या लाखों-करोड़ों देकर भी इन्हें पाया जा सकता है ? व्यक्ति अपना नजरिया बदले और जीवन की महत्ता, मूल्यवत्ता और गरिमा को समझे।

सृजनात्मक हो जीवन का स्वरूप

व्यक्ति के सम्मुख जीवन जीने के दो तरीके हैं—पहला, व्यक्ति सृजन करे; दूसरा, उसकी ऊर्जा विध्वंस में चली जाए। ऊर्जा के दो ही उपयोग हो सकते हैं—बनाना या मिटाना। जो व्यक्ति अपनी ओर से समाज में नई रचनाएँ सृजित

नहीं कर सकता, वह बनी हुई रचना को बिगाड़ने की कोशिश जरूर करेगा। अगर हिटलर को जीवन को सकारात्मक रूप देने का मार्ग मिल चुका होता तो हिटलर, हिटलर न होता। वह पच्चीस सौ साल बाद फिर महावीर या बुद्ध होता। अगर बुद्ध को अपने जीवन में दिव्य मार्ग न मिलता, तो वे बुद्ध नहीं, हिटलर या चंगेज खाँ ही होते। जो जीवन व्यक्ति के लिए महान् वरदान के रूप में है, वह उसे सृजन का मार्ग देता है या विध्वंस का, बनाने का कौशल देता है या मिटाने का, यह स्वयं व्यक्ति पर ही निर्भर है।

अगर कुदरत ने हमें वाणी दी है, तो इस वाणी के द्वारा हम गीत गाते हैं या किसी को गालियाँ देते हैं, यह हम पर निर्भर करेगा। किसी लाठी का उपयोग हम किसी बूढ़े आदमी के सहारे के रूप में करना चाहते हैं या किसी की पीठ पर वार करके उसको धराशायी करने में, यह हम पर निर्भर करता है। जो तीली घर के अँधेरे को भगा देती है, वही घर को जला भी सकती है। तीली का सदुपयोग या दुरुपयोग हम पर ही आधारित है।

आदमी चाहे तो अपने जीवन को स्वर्ग के आयाम दे सकता है और चाहे तो नरक के मार्ग पर स्वयं को धकेल सकता है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि आप किस कुल में पैदा हुए और आपके पूर्वज कौन रहे ? महत्त्व इस बात का है कि आपने जीवन की कौन-सी समझ ग्रहण की ? मैं एक ऐसे परिवार की मिसाल आपके सामने रखना चाहूँगा जिसमें दो भाई थे। एक भाई अव्वल दर्जे का नशेबाज था, जो हरदम शराब में धुत्त रहता; अपनी पत्नी और बच्चों को मारता-पीटता; जो कमाता, सारा नशे में उड़ा देता। उसी का दूसरा भाई अपने बच्चों पर जान छिड़कता; पत्नी को बड़ी नाजों से रखता; उसके घर में किसी प्रकार की कमी नहीं थी; समाज में खूब मान-सम्मान था। मैंने उन दोनों भाइयों से मिलकर इसका कारण जानना चाहा कि आखिर एक माँ की कोख से जन्म लेने वाली उन संतानों में इतना अन्तर कैसे ?

मैंने शराबी भाई से कारण पूछा, तो उसने कहा—'अगर मैं अपने बच्चों को मारता-पीटता हूँ, गाली-गलौच करता हूँ तो इसमें नई बात कौन-सी है ! मेरा बाप भी ऐसा ही था। वह भी मेरी माँ को ज़लील करता, हम बच्चों को खूब मारता-पीटता, सारे पैसे शराब में फूँक डालता। मैं जो कुछ हूँ, मेरे बाप के कारण हूँ।' मैं दूसरे भाई के पास गया और उससे भी पूछा—जनाब, तुम इतने सुशील

कैसे हो ? तुम सब लोगों के साथ इतनी मधुरता और शालीनता से कैसे पेश आते हो ? उसने कहा—अपने पिता के कारण। मैं आश्चर्य में पड़ गया। मैंने कहा—क्या मतलब ?

मेरा प्रश्न सुनकर दूसरे भाई ने कहा—'बचपन में मैं देखा करता था कि मेरे पिता अव्वल दर्जे के नशेबाज़ थे। वे नशे में मेरी माँ को, हम बच्चों को बड़ी बेरहमी से मारते-पीटते, असह्य गालियाँ निकालते। उसी वक्त मैंने संकल्प ले लिया कि मैं कभी भी अपनी पत्नी पर हाथ नहीं उठाऊँगा, मैं अपने बच्चों को नहीं सताऊँगा। मैं समाज में इज्जत की जिंदगी जिऊँगा। मेरे जीवन में जो कुछ भी अच्छाइयाँ हैं, वे इसी संकल्प की बदौलत हैं।' एक ही माता-पिता की सन्तान, एक ही वातावरण, लेकिन स्वभाव में, और परिणाम में कितनी भिन्नता ! जीवन का पाठ पढ़कर हम उसे ऊँचाइयाँ प्रदान करते हैं या उसे गर्त में ढकेलते हैं, यह हम पर, हमारी समझ और दृष्टि पर ही निर्भर है।

स्वर्ग हमारे हाथ में

कहीं ऐसा तो नहीं कि जो जीवन हमारे लिए एक अमृत वरदान है, जिसके सामने दुनिया भर की संपदाएँ तुच्छ और बेमानी हैं, उसे हमने बहुत दुःखी, खिन्न, विपन्न और दीन-हीन बना डाला हो ? जीवन तो बाँस की एक पोंगरी है, एक ऐसी पोंगरी कि जिसको लोग या तो आपस में लड़ने-लड़ाने के काम में लेते हैं या शामियानों को खड़ा करने के उपयोग में लेते हैं या अन्त्येष्टि संस्कार में प्रयोग करते हैं। मेरे लिए यह पोंगरी बड़ी मूल्यवान है। उतनी ही, जितना यह जीवन है। जीवन में और बाँस की पोंगरी में कुछ साम्यता है। इस जीवन रूपी पोंगरी का एक बेहतरीन उपयोग है, जिसे लोग नजर-अंदाज कर देते हैं, जिसके प्रति आँखें मूँद लेते हैं। वह उपयोग है उस पोंगरी से स्वरलहरियाँ पैदा करना, उसे बाँसुरी का रूप देना। अगर बाँस बाँसुरी बन जाए, बाँसुरी पर अँगुलियाँ सध जाएँ तो बाँस, बाँस न रहेगा, बाँसुरी बन जाएगा। संगीत का अनुपम संसार साकार हो जाएगा। तब बाँस को, जीवन के बाँस को जीने का मज़ा कुछ और होगा, अनेरा होगा, मधुरिम होगा।

इंसान चाहे तो अपने जीवन को आनंद का उत्सव बना सकता है। उसे किसी मंदिर में जाकर किसी पंचकल्याणक महोत्सव को मनाने की जरूरत नहीं पड़ेगी, वरन् उसका जीना और मुस्कुराना भी पंचकल्याणक महोत्सव का पुण्य लिये

हुए होगा। उसकी सौम्यता, शालीनता और आनंद ही उसका उत्सव होगा। उत्सवों के लिए उसे मेलों-महोत्सवों और पर्वों की जरूरत नहीं पड़ेगी। उसका पलक खोलना और कदम बढ़ाना भी किसी मेले को निमन्त्रण होगा।

स्वर्ग और नरक—इसी जीवन के दो पर्याय हैं। स्वर्ग के गीत और नरक का आतंक—दोनों जीवन के ही अवदान हैं। स्वर्ग के गीतों को इसी जीवन से निनादित किया जा सकता है। मरने के बाद तो मुझे नहीं मालूम कि हमारे बाप-दादों को कितना स्वर्ग मिला होगा। स्वर्ग तो उन्हीं को मिलता है, जिन्होंने अपना जीवन स्वर्ग बनाया है। हम चाहे मरने के बाद किसी के नाम के नीचे स्वर्गीय लिख दें, मगर उसको नरक में जाने से कोई रोक नहीं सकता, क्योंकि उसने अपना जीवन नरक बनाकर जीया था। हमने अगर क्रोध के साथ अपना जीवन जीया, तो मरने के बाद हमें चंडकौशिक बनने से कोई नहीं रोक सकता। नरक उनको मिलता है जिनका जीवन आज नरक है; स्वर्ग उनको मिलता है, जिनका जीवन आज स्वर्ग है। स्वर्ग और नरक दोनों ही जीवन के पर्याय और परिणाम हैं।

जो व्यक्ति हर हाल में मस्त है, वह नरक को भी स्वर्ग बनाने की कला जानता है। जिसने जीवन को स्वर्ग बनाना सीख लिया है, जीवन उसके लिए वरदान है, सौगात है। मैं जीवन का हर हाल में आनंद उठाता हूँ; चाहे कोई हमें गाली दे या स्तुति करे। जीसस ने तो सलीब का भी आनंद उठाया, हम कम-से-कम किसी की गाली का तो आनंद उठा ही सकते हैं। मीरां ने तो विष-पान को भी अमृत-भाव प्रदान कर दिया। हम किसी की उपेक्षा और उपहास के विष का तो सामना कर ही सकते हैं ना! अगर जीने की यह कला आ जाए तो सच, तुम्हारा हर कार्य मुक्ति का द्वार होगा।

प्रसन्नमन से हो हर काम

अगर बेमन से अपने कार्य को संपादित करोगे तो तुम्हारा हर कार्य तुम्हारे लिए बंधन की बेड़ी बन जाएगा और प्रफुल्लित हृदय से अगर यहाँ पर झाड़ू भी लगाओगे तो तुम्हारा झाड़ू लगाना भी तुम्हारे लिए मुक्ति का सोपान हो जाएगा। तुम कितने बोझिल मन से अपने जीवन को जीते हो, तुम्हारे लिए जीवन उतना ही बोझिल, बंधन की बेड़ी और नरक का द्वार बन जाएगा। जिंदगी को अगर उत्सव के साथ, बगैर बोझिल मन के साथ जीना आ गया और तुम्हारे सामने शिव प्रकट

होकर कहेंगे कि वत्स, तू क्या माँगता है ? तुम कहोगे कि अगर देना ही है तो सदा-सदा यह जीवन ही देना; और कुछ नहीं चाहिए । तुम अगर मुझे दुःख भी दोगे तो भी दुःख, दुःख न लगेगा, क्योंकि मैंने हर दुःख को अपने लिए सुख का सेतु बना लिया है । जो व्यक्ति सलीब पर चढ़ाए जाने के बावजूद कहता है कि 'मेरे प्रभु, तू इन्हें क्षमा कर । ये नहीं जानते कि ये क्या कर रहे हैं ?' इतनी करुणा, प्रेम की ऐसी रसधार बहाता है, तुम जरा सोचो तो सही, उस व्यक्ति के लिए केवल जीवन ही आनंद का वरदान नहीं होता, मृत्यु भी जीवन का महोत्सव बन जाया करती है । जीवन को बंधन की बेड़ी भी बनाया जाता है और स्वर्ग का सेतु भी । हर अभाव में, हर कमी में जीवन को वैसे ही रोशन कर सकते हो, जैसे अँधेरे कमरे में कोई एक दीप जलता है और जैसे कीचड़ के बीच कोई कमल खिलता है ।

लोग जीवन को बोझिल मन से जीते हैं और बोझिल मन से ही जीवन की गतिविधियों को संपन्न करते हैं । अगर बेटे से यह कह दिया जाए कि बेटा, जाकर ब्रेड का एक पैकेट ले आओ तो बेटा कहता है—'ओफ् ! पापा, अब ब्रेड के लिए क्या जाना ! मम्मी ने परोंठा बनाया है, उसी को खा लीजिए न ।' बोझिल मन से ब्रेड खरीदने जाओगे तो तुम्हें वह ब्रेड भी कुत्ते का भोजन ही दिखाई देगी । प्रफुल्लित हृदय से जाओगे तो तुम बासी ब्रेड में भी कोई ताजी ब्रेड चुनकर ले आओगे, काँटों में भी फूल तलाश लोगे । कार्य प्रफुल्लित हृदय से किया जाए तो कोई कार्य बोझिल नहीं होता । कार्य स्वयं परमात्मा की प्रार्थना बन जाता है ।

मन का बोझ दूर हटाएँ

कोई भी व्यक्ति अपने कंधे पर बोझा तभी तक लादता है, जब तक वह सामान एक जगह से दूसरी जगह तक न पहुँच जाए । उसे तुम मूर्ख न कहोगे तो क्या कहोगे जो रात को सोया था तब तो तकिया लगाकर सोया था और जब दिन में चल रहा है तो भी तकिए को अपने माथे से लगाकर चलता है । रात के लिए वह सुख का साधन रहा होगा, पर दिन के लिए तो वह चित्त का बोझा बन चुका है । तुम अगर कहो कि मैं भला इस तकिए को कैसे छोड़ दूँ, तो यह तुम्हारा बचकानापन है । ऐसे ही अगर सोचते हो, चिन्तन करते हो, मगर उस ऊहापोह से मुक्त नहीं हो पाते, तो वह चिंतन भी चिंता का कारण बन जाया करता है । जब जरूरत हुई तो सोचो और जब जरूरत न हुई तो मन शान्त—'ब्लैंक' कर लिया,

यही जीवन को सुख से जीने का सीधा-सरल रास्ता है ।

शान्त, सजग और उत्साहपूर्ण जीवन का स्वामी होना ही जीवन को उत्सव बनाना है ।

साधु-सन्त लोग शरीर को यातनाएँ देते हैं और गृहस्थ लोग हर पल अपनी मानसिक यंत्रणाएँ झेलते रहते हैं, कभी क्रोध में, कभी ईर्ष्या में, कभी द्वेष में, कभी वैमनस्य में । जैसे चक्की पीसती है वैसे ही आदमी दिन-रात अपने मन और चित्त के बोझ से दबा रहता है, पिसता रहता है । मैं कहता हूँ जीवन उत्सव है, जीवन वरदान है । जीवन की हर गतिविधि ईश्वर की ही आराधना है । हमारा हर कार्य प्रभात का पुष्प बन जाए, एक ऐसा पुष्प जिसे हम सिर पर रख सकें, हृदय को सुवासित करने के लिए प्रयोग कर सकें, परमात्मा को अहोभाव से समर्पित कर सकें । इसलिए तुम हर कार्य को बड़े प्रफुल्लित हृदय से करो । अगर लगता है कि कार्य उल्लसित भाव से नहीं हो रहा है, आपको परिणाम नहीं दे रहा है तो कार्य को बदलने की बजाय अपने चित्त की दशा को बदलने की कोशिश करो । अगर आप आईने के सामने जाते हैं और आईना आपको आपकी भद्दी शक्ल दिखाता है, तो आईने को बदलने से बात न बनेगी । तुम अपने चेहरे पर एक सुवास भरी मुस्कान ले आओ, आईना अपने आप गुलाब के फूल की तरह खिल उठेगा ।

अगर किसी बगीचे में कोई लकड़हारा या सुथार जाता है तो वह यह टटोलेगा कि किस पेड़ की लकड़ी कैसी है । उसकी नजर सीधे उस पेड़ की लकड़ी पर जाकर टिकेगी । अगर कोई सौन्दर्य प्रेमी व्यक्ति वहाँ पहुँच जाए, तो वह देखेगा कि फूल किस तरह से खिले हुए हैं और उनसे कैसी महक आ रही है । प्रसन्न हृदय से संसार को देखोगे तो संसार स्वर्ग नजर आएगा और खिन्न हृदय से संसार को देखोगे तो संसार नश्वर और नरक ही दिखाई देगा । चित्त के बोझों को नीचे उतार फेंको, ताकि हमारा जीवन आकाश-भर आनंद का मालिक बन सके ।

मन को दें सार्थक दिशाएँ

क्या हैं आखिर चित्त के बोझ ? कौन-से वे पहलू हैं जो हमारे चित्त में बोझ बनकर दिन-रात हमें पिस रहे हैं, घिस रहे हैं, दबा रहे हैं ? मनुष्य का मन हो शान्त, निर्भार, पुलकित और ऊर्जस्वित । अगर हम अपने मन को बोझिल और तनावग्रस्त देख रहे हैं, तो चिंतित न हों । मन बदला जा सकता है । बोझों को मन के कंधों से

नीचे उतारा जा सकता है । हमारे युग की यह बड़ी उपलब्धि है कि मनुष्य अपनी सोच, समझ और जीने की शैली में परिवर्तन लाकर जीवन को उत्सव का आयाम दे सकता है । मैं ऐसा होता हुआ देख रहा हूँ, इसीलिए अनुरोध करता हूँ । हम मात्र अपने मन के बोझों को, भारों को समझें और भीतर के निषेधों को विधायकता प्रदान करें ।. अपनी नकारात्मकताएँ हटाएँ और सकारात्मकताएँ/रचनात्मकताएँ ग्रहण करें ।

चिता बुझाएँ चिंता की

चित्त का पहला बोझ है—दिन-रात मन में पलने वाली चिन्ताएँ । चिता और चिंता दोनों समान हैं । केवल एक बिन्दु का फर्क है । चिता मात्र मुर्दे को जलाती है, किन्तु चिंता जीवित को भी भस्म कर देती है । इसीलिए चिंता चिता से दस गुनी ज्यादा खतरनाक है । कोई अगर पूछे कि शरीर का ज्वर क्या है ? आप कहेंगे मलेरिया । वहीं कोई पूछे कि मन का ज्वर क्या है ? मैं कहूँगा चिंता । चिंता ही ज्वर है और चिंता ही जरा । चिंता ही अकाल मृत्यु का कारण है ।

चिंता का मतलब है ऐसी सोच, ऐसी घुटन कि यह कैसे हुआ या कैसे होना चाहिए या कैसे होगा । मन में इस तरह की चलने वाली उधेड़बुन ही चिंता है । खाली/निकमा बैठा आदमी चिंता ही करेगा । **दुःखों से मुक्त रहना चाहते हो, तो स्वयं को सदा व्यस्त रखो ।**

कहते हैं कि चर्चिल को अठारह घंटे काम करना पड़ता था । किसी ने पूछा, इतनी जिम्मेदारियों से क्या आपको चिंता नहीं होती ? चर्चिल ने जवाब दिया—मेरे पास इतना समय ही कहाँ है कि मैं चिंता करूँ ?

व्यस्तता—चिंता से मुक्त होने का पहला मंत्र है । ठाला बैठा आदमी सौ तरह की चिंताएँ पालता है । कभी धन के बारे में, कभी पत्नी के बारे में, कभी बच्चों के बारे में, कभी दोस्त, दुश्मन के बारे में । आदमी चाहे-अनचाहे अपने साथ इन चिन्ताओं को ढोए रहता है । वह अगर अपने वर्तमान की चिंता करे तो शायद कुछ बात भी बने मगर वह या तो अतीत के बारे में सोचता है या भविष्य के विषय में । जो व्यक्ति भूतकाल के बारे में सोचता है वह भूत ही हो जाता है । जो बीत चुका, सो बीत चुका । बीता हुआ समय और बीती हुई बातें लौटकर नहीं आने वाली हैं । रूठा हुआ देवता एक बार आपके प्रसाद चढ़ाने से प्रसन्न हो सकता है, मगर बीता

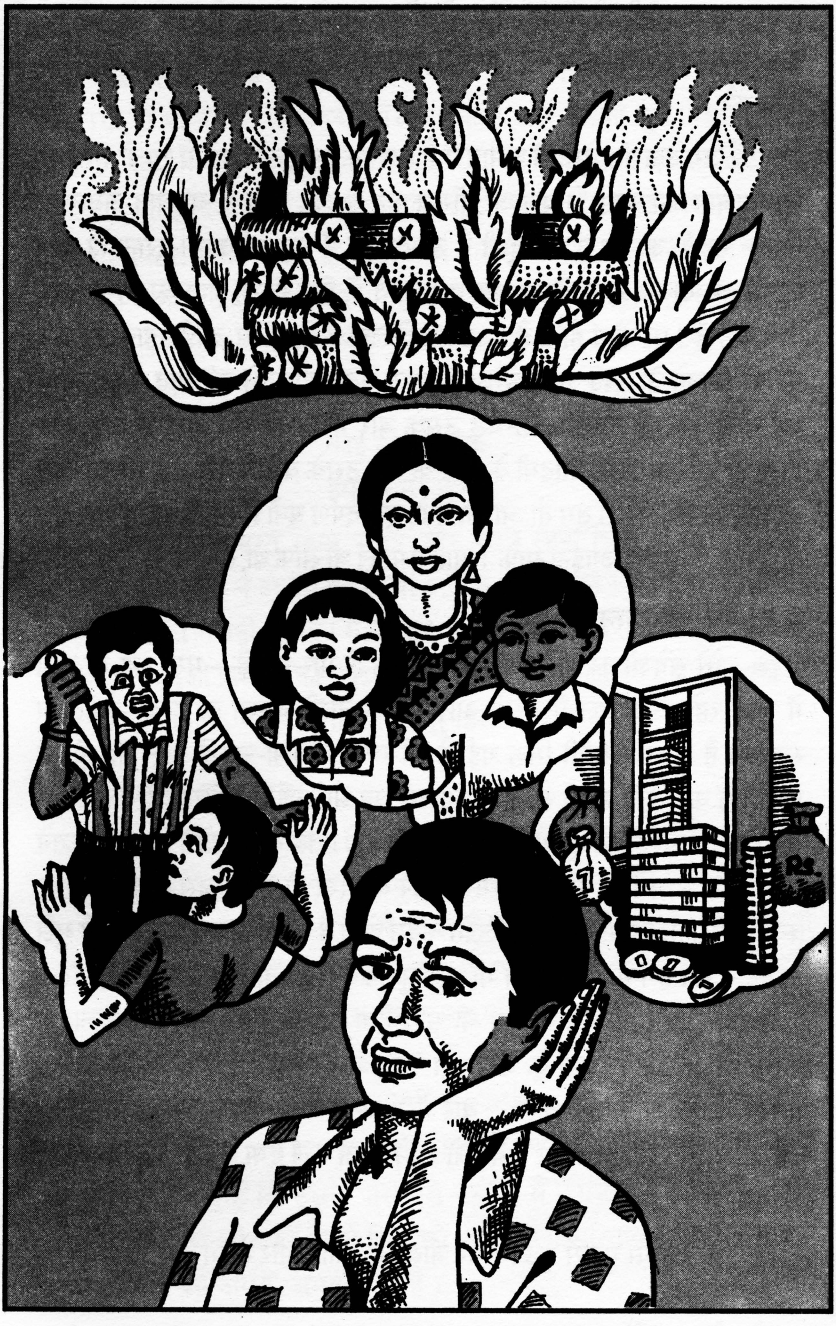

चिंता चिता से दस गुनी ज्यादा खतरनाक है।

हुआ वक्त आदमी की जिंदगी में कभी लौटकर नहीं आता । बीत गई सो बात गई, तकदीर का शिकवा कौन करे, जो तीर कमां से निकल चुका, उस तीर का पीछा कौन करे ?

जब तक तीर तुम्हारी कमान में है तब तक तुम उसके बारे में सोचो, विचारो, शायद बात बन जाए, लेकिन जो तीर कमान से छूट गया है, जो बात जबान से निकल गई है, जो घटना घट चुकी है, उसके बारे में क्या सोचना ! पुराना हो जाने पर तो हम दीवार से कलैण्डर तक उतार देते हैं, फिर किसी बात का दामन क्यों थामे बैठे हैं ! पर ऐसा होता है । आदमी मिलता है किसी से, कोई महानुभाव जब घर पर मिलने के लिए आता है, आधे घण्टा तक आपस में बतियाते हैं और जब वह चला जाता है तो हम बैठे-बैठे उसके बारे में सोचते हैं । आदमी गया, बात खत्म हो गई । तुम उस आदमी के जाने के बाद उसके बारे में बैठे-बैठे सोचते रहते हो, यही तो चिन्ता है । तुम तो आईना बनो, एक दर्पण बनो कि कोई आया और तुम बोल उठे । वह हटा, आईना साफ । आईना पहले भी साफ था, बाद में भी साफ रहा ।

मस्त रहें हर हाल में

मेरे संदेशों का सार-सूत्र है तो वह एक ही सार-सूत्र है—मस्त रहो, हर हाल में मस्त रहो । हर हाल में मस्ती और खुशमिजाजी आत्मा का सबसे बेहतरीन स्वास्थ्य है । रूखी-सूखी मिल गई तो भी मस्त, चिकनी-चुपड़ी मिल गई तो भी मस्त । मैं कहाँ दुनिया की सोचूँ, दुनिया की वह सोचेगा जो दुनिया को बनाता है । मैं तो अपने बारे में सोचूँ और अपने में मस्त रहूँ । तब तुम देखोगे कि तुम कितने शांत और प्रसन्न-चित्त हो । कोई मेरे चलने को देखे तो असमंजस में पड़ जाएगा, क्योंकि मेरा हर कदम बहुत प्रफुल्लित कदम होता है । मेरा हाथ का उठाना भी मुझे आनंद दे रहा है । मेरा बतियाना भी मुझे सुकून देता है । मैं आप लोगों से इसलिए बोल रहा हूँ, क्योंकि मुझे बोलना भी सुख देता है । मेरे लिए वाणी का उच्चारण करना भी आप सब लोगों के जीवन से प्यार करने जैसा है । चिंता नहीं, जो होता है संयोग है । आने वाले कल के बारे में सोच-सोचकर तुम अपनी काया को ही दुबली करोगे । निश्चिंत रहो । अरे जो आने वाला कल देगा, वह कल की व्यवस्था भी देगा ।

कोई अगर मुझसे पूछे कि मेरे जीवन में संतोष और शांति कैसे आई, जबकि

मनुष्य तो मैं भी हूँ। मैंने देखा कि जब किसी माँ को किसी संतान को जन्म देते देखा और उसकी कोख से बच्चा बाहर निकल अया और बाहर निकलते ही वह रोने लगा तो माँ ने झट से अपना आँचल उघाड़ा और उसको दूध पिलाना शुरू किया। जीवन में देखा गया यह दृश्य सदा-सदा के लिए आनन्दित कर बैठा कि जो प्रकृति, जो ईश्वर मनुष्य को जन्म देने से पहले उसके जीवन की व्यवस्था करता है, फिर हमें किस बात की चिन्ता ! हम जन्म बाद में लेते हैं, माँ का आँचल दूध से पहले भर जाता है। दुनिया में किसी की बेटी अब तक धन के अभाव में कुँआरी नहीं रही है। कोई-न-कोई व्यवस्था बैठ ही जाती है और बेटी पार लग ही जाती है। तू किस बात की चिंता करता है ? मस्त रह, मस्त; हर हाल में मस्त।

कोई रहे बस्ती में,
हम रहें मस्ती में।

हर ह़ाल में मस्त रहना, संतुष्ट और प्रसन्न रहना चिंता से मुक्त होने का रामबाण तरीका है। न अतीत की सोचो और न भविष्य की। उपयोग हो वर्तमान का। अतीत की गलती वर्तमान में न दुहरे और वर्तमान में ऐसे बीज न बोए जाएँ, भविष्य में जिनकी फसलों को काटते समय खेद और गिला रहे। वर्तमान का ही ऐसा प्रबन्धन हो कि भविष्य वर्तमान का सुनहरा परिणाम बने।

हीन-भावना दूर हटाएँ

चित्त का दूसरा बोझ है हीन-भावना से ग्रस्त होना। आदमी के भीतर यह बोझ पलता है कि वह हर वक्त अपने आपको हीन भावनाओं से घिरा हुआ पाता है। उसे हर समय यह लगता है कि मैं कायर हूँ, कमजोर हूँ, मैं कुछ नहीं कर सकता हूँ; मुझमें कुछ नहीं; मैं तुम्हारे मुकाबले क्या हो सकता हूँ ? हीनता का यह विचार, यह ग्रंथि आदमी की सकारात्मक सोच, आत्मविश्वास, स्वाभिमान और उसके गौरव का कुण्ठित कर डालती है। आदमी जब किसी दूसरे सुन्दर व्यक्ति को देखता है तो सोचता है कि मैं सुन्दर नहीं हूँ। कभी उसे लगता है कि मैं काला हूँ, कभी लगता है कि मैं कम पढ़ा-लिखा हूँ, कभी लगता है कि मैं अपाहिज हूँ। कभी आदमी को लगता है कि उसके पास पैसे नहीं हैं, मैं कमजोर हूँ। आदमी अपने चित्त में यह सोच-सोचकर अपने चित्त को, अपने मनो-मस्तिष्क को भारभूत बना लेता है कि मुझमें अमुक-अमुक कमी है।

अगर आप यह सोचते हैं कि आपके हाथ में एक छठी छोटी-सी अँगुली और निकल आई, इस कारण आप अपने आपको कमजोर और हीन समझते हैं, तो जरा उसको भी तो देखो जिसका पूरा हाथ ही कटा हुआ है । तुम्हारे चेहरे पर आँख के एक किनारे छोटा-सा दाग है, जिसके कारण तुम अपने आपको बदसूरत समझते हो, जरा उस पर भी तो नजर डालो, जिसकी एक आँख ही नहीं है । अपने से बड़ों को देखकर यह सोचना कि मैं छोटा, मैं अपाहिज, मैं कुछ करने जैसा नहीं हूँ, अनुचित है । हर समय आत्म-विश्वास से भरे हुए रहो, सोचना है तो हमेशा सकारात्मक सोचो । ईश्वर ने जो दिया है, उसके प्रति शुक्रिया अदा करो । जो दिया है, हम उसमें ही आनंद मनाएँ । वह आनंद ही अनेरा होगा ।

आत्मविश्वास की अलख जगाएँ

मैं कहना चाहूँगा एक ऐसे व्यक्ति के बारे में जिसने आत्म-विश्वास को नयी ऊँचाइयाँ दीं । उस व्यक्ति ने अपने जीवन के इक्कीसवें वर्ष में व्यापार किया और वह असफल हो गया । बाईसवें वर्ष में उसने चुनाव लड़ा, मगर उस छोटे-से चुनाव में वह हार गया । सत्ताइस वर्ष की उम्र में उसकी पत्नी का देहावसान हो गया और अट्ठाइसवें वर्ष में वह अपना मानसिक सन्तुलन खो बैठा । अपनी उम्र के पैंतीसवें वर्ष में उसने कांग्रेस का चुनाव लड़ा और वह चुनाव भी हार गया । उसने अपने जीवन के पैंतालीसवें वर्ष में सीनेट का चुनाव लड़ा, मगर वह चुनाव भी हार गया । सैंतालीसवें वर्ष में उसने उपराष्ट्रपति-पद का चुनाव लड़ा । वह उसमें भी हार गया, लेकिन बावनवें वर्ष में उसने फिर चुनाव लड़ा । इस बार जीत उसके हाथ लगी । वह एक साधारण इंसान से उठकर अमेरिका का राष्ट्रपति अब्राहिम लिंकन हो गया । यदि व्यक्ति अपने आप पर आत्म-विश्वास, स्वाभिमान तथा निरन्तर सकारात्मक सोच और कर्मठता बनाए रखे तो दुनिया में मिलने वाली सौ-सौ असफलताएँ भी उसको सफलता की ओर ही ले जाएँगी ।

जिंदगी में कोई भी असफलता, असफलता नहीं होती । याद रखें, आत्म-विश्वास के बगैर आप अपनी जिंदगी में कुछ नहीं कर पाएँगे । अपने आपको हीन मत समझो । काले हैं तो ग्रंथि न पालें । श्याम रंग का भी अपना सौंदर्य होता है, वरना उस श्याम के लिए लोग इतने बावरे क्यों होते ? श्याम को काला कहकर अपने आपको हीन मत समझो, उस श्याम रंग का सौंदर्य-पान करने की चेष्टा करो । ब्लैक इज दा ब्यूटीफुल । श्याम रंग भी सौन्दर्य का आधार होता है । अपने आप

पर, अपने छोटे-से-छोटे कार्य पर गौरव करो कि यह मेरा कार्य है, इसे मैंने सम्पादित किया है । अगर कोई आदमी आपको यहाँ पर झाड़ू लगाने का काम सौंप दे, तो तुम बड़ी शालीनता से झाड़ू भी लगा लो कि जैसे कोई माईकल एंजिलो ने पत्थर को तराश-तराशकर भगवान बुद्ध की प्रतिमा उकेरी हो; कि जैसे रवीन्द्रनाथ टैगोर अपनी 'गीतांजलि' की रचना में लगे हों । कोई भी कार्य दुनिया में छोटा नहीं होता; छोटा वह तब बन जाता है जब तुम कार्य को सही तरीके से नहीं कर पाते हो; उस कार्य के प्रति लापरवाही बरतते हो या पूर्वाग्रह पाल लेते हो ।

तुम किस जाति-कुल में पैदा हुए, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता । हरिजनकुल में पैदा हुए एक महानुभाव—जगजीवनराम भी देश का नेतृत्व कर सकता है । गौर करें, भारत के वर्तमान राष्ट्रपति भी अनुसूचित जनजाति से जुड़े हुए हैं ।

हम अपने भीतर टटोलें कि आखिर वे कौन-से कारण हैं, जिनके चलते हम हीन-भावना से ग्रसित हैं । अगर गरीबी के कारण हम कुंठित हैं, तो कुंठा निराधार है । देश के प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री और अमेरिका के राष्ट्रपति अब्राहिम लिंकन गरीब ही थे । पर उनके विकास में गरीबी कभी भी बाधक न बनी । अगर आपको लगता है कि आप सुन्दर नहीं हैं, इस कारण कुंठित रहते हैं, तो देखिए माइकल एंजेलो को जो स्वयं कुरूप थे, पर उन्होंने चित्र इतने सुन्दर बनाए कि उनके भीतर का सौन्दर्य जग-जाहिर हो गया । विकलांग है तो भी क्या, प्रसिद्ध संगीतकार रवीन्द्र जैन अंधे हैं । प्रसिद्ध कवि पोप अपंग थे । मध्यकालीन युग के महान कवि मलिक मोहम्मद जायसी आँख से काने और बदसूरत थे । हम उन श्रेष्ठ लोगों को आज भी याद करते हैं । उनकी सूरत के कारण न सही, पर उनकी सीरत आज भी संसार के लिए प्रेरणादायी है ।

मैं तो कहूँगा कि अगर जीवन में कोई कमी भी है, तो उसकी चिंता न करें, वरन् सफलताओं की उन मीनारों को छूने की कोशिश करें, जो आपको सम्मानित बनाएँ । आपकी सफलता की सुन्दरता में कुरूपता दब जाए । आदमी यह सोचे कि मैं जैसा हूँ, अच्छा हूँ । अपने कार्य पर, अपनी कार्य-शैली पर गौरव करो और अगर लगे कि जीवन की शैलियाँ नकारात्मक हैं तो उन्हें सकारात्मक बनाएँ, हर कार्य को करते समय स्वाभिमान और आत्म-गौरव के भाव से भरे हुए रहें । ऐसा करने से हमारी शक्ति दो गुनी हो जाएगी ।

आत्मविश्वास का संबल कभी कमजोर नहीं होना चाहिए। विश्वास और साहस—हमारे जीवन की संजीवनी शक्ति बन जाए, आँखों की रोशनी बन जाए। तुम चले तो आँधियाँ-तूफान खुद ही चल पड़ेंगे। सागरों की बात क्या, हिमगिरि सरीखे ढल पड़ेंगे। मत समझना ये निशाएँ पथ तुम्हारा रोक लेंगी, तुम जले तो दीप क्या, सूरज हजारों जल पड़ेंगे।

आवश्यकता है केवल विश्वास और पुरुषार्थ को जगाने की। हावी मत होने दो किसी भी हीनता और दीनता को अपने मन पर। जागो, जागे सो महावीर। जो बुझदिल है, वही कायर है।

बचें, लालसाओं के चंगुल से

तीसरी बात, जिसके कारण आदमी के चित्त पर सदा बोझ बना रहता है, वह है आदमी के मन में पलने वाली व्यर्थ की लालसाएँ, लालच की वृत्तियाँ। जीवन में सम्यक् कर्मों को सम्पादित करना, आजीविका के साधन जुटाना, सुखपूर्वक जीवन जीना मानवमात्र की आवश्यकता है। हर किसी व्यक्ति को श्रम करना चाहिए, विकास की ऊँचाइयों को छूना चाहिए, पर व्यर्थ की लालसाओं और तृष्णाओं में उलझकर जीवन को कोल्हू के बैल की वर्तुल-यात्रा नहीं बना बैठना चाहिए। स्वार्थ, लोभ, लालच आदमी को मानवता से वंचित कर देते हैं। उसे सूझता है केवल और पाऊँ, और पाऊँ।

लालसाएँ तो मकड़जाल की तरह होती हैं, जिसमें मन की मकड़ी घिर जाती है। लोभ-लालच के चलते आदमी दिन-रात घर से दुकान और दुकान से घर के बीच अपनी जिन्दगी पूरी कर देता है। मैंने बचपन में वह कहानी पढ़ी थी कि जिसमें एक गधा था, जो घर से घाट और घाट से घर के बीच अपनी जिन्दगी पूरी कर देता है। मुझे यह प्रतीक बड़ा प्यार लगा। प्यारा इसलिए लगा, क्योंकि जब इंसान को पढ़ा तो लगा कि इंसान भी तो ऐसा ही जीवन जीता है। वह भी तो घर से दुकान और दुकान से घर के बीच अपनी जिन्दगी को झोंक देता है।

दो दिन पहले एक महानुभाव हमारे पास बैठे थे, शायद किसी संत ने उनको संकेत किया कि जब समय मिले तो मंदिर-दर्शन का जरूर लाभ उठाएँ तो उन्होंने कहा—'मैं तो दुकान चला जाता हूँ।' उनसे पूछा, 'कितने बजे जाते हो?'

'सुबह छह बजे', उन्होंने जवाब दिया।

आदमी की लालसा या लालच तो देखो । आज इस कलियुग में लोग आठ-नौ बजे तक तो बिस्तरों में दुबके रहते हैं कुंभकरण की तरह, लेकिन ये महानुभाव तो सुबह छह बजे दुकान खोल देते हैं । पूछा, 'दुकान रात को कितने बजे बंद होती है ?'

जवाब मिला, 'रात को बारह बजे ।'

कार्यों और कर्त्तव्यों का निर्वाह होना चाहिए मगर अमर्यादित लालसाएँ और कामनाएँ मनुष्य को ऊँचा बनाती हैं । जीवन का हर कार्य और कर्त्तव्य मनुष्य के लिए देवदूत की तरह होता है, लेकिन जिन भौतिक सुखों के पीछे हम अन्धे होकर दौड़ते हैं, वे हमारी जिन्दगी के चापलूस शत्रु हुआ करते हैं, जो आदमी के खून को चूसते रहते हैं । पैसे कमाने के चक्कर में आदमी भूल जाता है कि उसके लिए समाज भी कुछ है, परिवार भी कुछ है, बूढ़े-बुजुर्ग भी कुछ हैं । उसे याद नहीं रहता कि और भी लोग हैं जिनके बीच उठना-बैठना चाहिए और अपने प्यार को, अपने स्नेह को बाँटना चाहिए ।

कमाओ, जरूर कमाना चाहिए, किन्तु कमाने की एक सीमा हो । बच्चे चाहते हैं कि उनके पिता उनको प्यार दें, उन्हें गले लगाएँ, उनको पढ़ने और आगे बढ़ने के सभी अवसर मिलें । बच्चों के प्रति अपने दायित्वों और कर्त्तव्यों की आप उपेक्षा नहीं कर सकते । आप अपने कर्त्तव्यों को जरूर निभाएँ, मगर व्यर्थ की लालसाओं में न उलझें । जिन्दगी को घर से घाट और घाट के बीच ही पूरा न कर डालें । कर्त्तव्य के और भी क्षेत्र हैं । काम करने को और भी हैं । जीवन को उत्सव बनाएँ, अमृत वरदान बनाएँ ।

हमारे सौ-सौ जन्मों के पुण्यों से जीवन का यह स्वरूप उभरा है । अपने जीवन को हम जितना अधिक वरदान बनाकर, प्रकृति की सौगात बनाकर जिएँगे, यह जीवन हमें उतना ही सुख और आनंद देगा । मैंने जाना है कि जीवन कितना सुखकर होता है । किस तरह से यह स्वर्ग के गीत रचता है । मेरे लिए यह जीवन केवल बाँस की पोंगरी नहीं, एक सुरीली बाँसुरी है, जिसको मैं जब-तब बड़े प्रफुल्लित भाव से सुना करता हूँ, गुनगुनाया कराता हूँ । आप भी इस बाँसुरी को साधना सीखें, जीवन को बोझ न मानें । मस्त रहें, मस्त, हर हाल में मस्त ।

○○○

औरों का दिल जीतें

मनुष्य के पास ऐसी कोई जादुई छड़ी नहीं है, जिसे हवा में लहराए और दुनिया की फ़िज़ा बदल जाए। उसके पास वे पंख भी नहीं हैं कि जिनके चलते वह आकाश में ऊँची छलांग लगा सके। हाँ, व्यक्ति के पास वे कदम जरूर हैं जिनके सहारे वह बड़े-से-बड़े पर्वतों को भी लाँघ ही सकता है।

मनुष्य के कदम भले ही छोटे लगते हों, पर यदि वह निरन्तरता और सातत्य बनाये रखे तो आत्म-विश्वास से भरे ये छोट-छोटे कदम उन ऊँचाइयों को छू सकते हैं, जिनकी उसने कल्पना भी नहीं की हो। लक्ष्य अगर उन्नत हैं, दृष्टि अगर उच्च है तो ये वामन कदम ढाई डग में ही सारे ब्रह्माण्ड को नाप सकते हैं।

विशाल नजर आने वाली नदी अपने उद्गम-स्थल पर छोटी-सी धार भर होती है, एक ऐसी पतली धार कि जिसे कोई टिड्डा और पतंगा भी पार कर सकता है। वही धार विराट् बनते-बनते किसी नील का, किसी गंगा का रूप ले लेती है। जिन्हें हम केवल बादल की छोटी-सी बूँदें कहते हैं, वे अगर विकराल रूप धारण कर लें, तो बाढ़ का रूप ले लेती हैं। किसे पता है कि यह बरगद का विशाल वृक्ष कभी नाखून पर रखे जा सकने वाले किसी बीज से जन्मा है। जिसे हम तीली कहते हैं, अगर वह आग का रूप धारण कर ले, तो वह बड़े-से-बड़े नगर को भी भस्मीभूत

कर सकती है ।

मनुष्य के अन्तर्मन में उठने वाली कल्पना की एक लघु तरंग कला के नायाब नमूनों में तब्दील हो जाया करती है । मनुष्य का एक छोटा-सा वक्तव्य इतिहास की धारा को मोड़ सकता है और उसका एक छोटा-सा चिंतन एक नये आविष्कार का सूत्रधार बन जाया करता है । जिस गंदगी से सभी घृणा करते हैं, वह खाद बनकर किसी फूल को खिलाने का सामर्थ्य रखती है, खुशबू लुटाने का माद्दा रखती है । जब गंदगी भी उपेक्षा योग्य नहीं है, तो मनुष्य अपने को दीन-हीन क्यों माने ? उसके जीवन में भी चमत्कार घटित होने की भरपूर संभावनाएँ हैं ।

जगह बनाएँ औरों के दिल में

आदमी जन्म के साथ अकेला पैदा होता है और मृत्यु के साथ अकेला ही जाता है; लेकिन जीवन भर अपने आपको लोगों से घेरे रखता है, रिश्तों का नाम देकर, समाज की संज्ञा देकर । महत्त्व इस बात का नहीं है कि आदमी समाज में जीता है या समाज से हटकर, महत्त्व इस बात का है कि वह सबके बीच जीते हुए सबके दिलों में अपना कितना मोहब्बत भरा स्थान बना पाता है । समाज के बीच जीना आदमी का सौभाग्य है, लेकिन आदमी के दिल में अपनी जगह बना लेना उसका अपना वैशिष्ट्य है । कुछ फूल कागज के होते हैं, जिन्हें गुलदस्तों में सजाया जाता है और कुछ फूल ऐसे होते हैं, जिनकी सुवास और प्राणवत्ता के कारण हम उन्हें अपने गले का हार बनाते हैं, अपने शीश पर अंगीकार करते हैं ।

ओ आजकल के दोस्तो,
ये कागज के फूल हैं ।
हैं देखने में खुशनुमा,
पर सूँघने में धूल हैं ।
जिस फूल में खुशबू है,
वह फूल गले का हार है ।
जिस फूल में खुशबू नहीं,
वह फूल ही बेकार है ।

जिस फूल में अपनी कोई सुवास और सौरभ नहीं, उस फूल को फूल कैसे कहा जाए ? आदमी की प्राणवत्ता और जीवंतता समाज के बीच तभी सिद्ध होती

है जब तुम जिस रास्ते से गुजर जाओ, उस रास्ते से तुम्हारे साथ दस हाथ और खड़े हो जाएँ; तुम्हारा गुजरना भी हर गली-मौहल्ले को तरंगित और आंदोलित कर दे। आदमी आदमी के दिल में कितनी जगह बना पाया, यही मूल्यवान है।

आदमी के धन की कीमत उसके परिवार के लिए होती है, दूसरों के लिए तो मूल्य तुम्हारे बरताव का है। कपूर अगर जल भी जाता है तो अपनी पहचान, अपनी मौजूदगी का अहसास छोड़ जाता है। तुम जिए या मर गए, तुम्हारी चिता जली कि तुम चैतन्य रहे। मुद्दे की बात यह है कि चिता पर जलने के बाद भी तुम अपनी सुवास दुनिया में छोड़ जाओ। आखिर, मनुष्य का विमल यश ही एकमात्र अमर होता है।

एक बहुत प्यारा प्रसंग है जगडू शाह के जीवन का। जगडू शाह एक बहुत बड़ा दानवीर और साहूकार हुआ। उसने अपनी जिंदगी में केवल राष्ट्र के लिए ही अपनी संपदा को समर्पित नहीं किया, वरन् मंदिरों के लिए भी, और तो और मस्जिद के लिए भी उसने अपनी थाती और संपदा का उपयोग किया। कहते हैं कि किसी समय जगडू शाह का व्यापार ठेठ ईरान के दुरमुज बंदरगाह से होता था। उसी बंदरगाह से नुरुद्दीन का भी व्यापार होता था। दोनों के वहाँ सौ-सौ जहाज खड़े रहते थे। एक बार की बात है, वहाँ नीलम़ का एक पत्थर बिक्री के लिए आया। उस पत्थर को जगडू शाह के मुनीम ने लेना चाहा, लेकिन नुरुद्दीन के आदमियों ने यह कहकर वह पत्थर अपने हाथों में ले लिया कि इस तट पर पहला हक नुरुद्दीन का है, क्योंकि वह यहाँ का मूल निवासी है, जबकि जगडू शाह तो परदेशी है। बात के बढ़ते कितना वक्त लगता है! बात भी ऐसी अड़ गई कि मुनीम ने कहा कि पहले मैंने पत्थर को देखा और जगडू शाह का नाम मैंने इस पर स्थापित कर दिया, यह पत्थर जगडू शाह के पास ही रहेगा।

ईरान के बादशाह के अनुयायियों ने उस पत्थर को नीलाम करना चाहा, तो नुरुद्दीन ने उसकी बोली लगाई। पत्थर तो इतना कीमती नहीं रहा, मगर बात जब नाक की हो, तो फिर कम-ज्यादा का ख्याल नहीं रहता। उसने कहा—'एक हजार दीनार'। जगडू शाह के आदमियों ने कहा—'दो हजार दीनार'। उसने कहा—'पाँच हजार दीनार'। उधर से आवाज आई—'पच्चीस हजार दीनार'। बात बढ़ती ही चली गई। नुरुद्दीन ने इसे अपनी प्रतिष्ठा का सवाल बना लिया। उसने

कहा—'पचास हजार दीनार'। जगडू शाह के आदमी को लगा कि पैसा तो ऐसे ही आएगा और जाएगा, किन्तु जगडू शाह का नाम नीचा नहीं होना चाहिए। उसने सीधे सवा लाख दीनार बोल दिये। एक मामूली नीले-से पत्थर के लिए सवा लाख दीनार! पत्थर बिक गया।

पत्थर जगडू शाह के पास भद्रावती लाया गया। जब जगडू शाह को सारी बात पता चली कि तो उसने अपने मुनीम का कंधा थपथपाया और कहा—'तुमने ईरान में अपने मालिक का नाम रखा, उसके लिए तुम्हें साधुवाद है। इसका उपयोग पूजा-आराधना या किसी-न-किसी इबादत के लिए ही किया जाएगा।' उसने कहा—'मंदिरों के शिल्पियों को यहाँ आमंत्रित किया जाए।' तब मंदिर के शिल्पियों को वहाँ आहूत किया गया। उसने शिल्पियों से कहा—'मुझे अपनी ओर से एक मस्जिद का निर्माण करवाना है।'

जगडू शाह की बात सुनकर लोग इस बात के लिए भौंचक्के हो उठे। शिल्पियों ने कहा—'मालिक, कोई चूक तो नहीं हुई है। आप भूल से मंदिर के बजाय मस्जिद बोल चुके हैं।' जगडू शाह ने कहा—'नहीं, जिस नुरुद्दीन ने एक पत्थर को खरीदने के लिए पचास हजार की बोली चढ़ा दी, वह उसका उपयोग किसी मस्जिद के निर्माण के लिए ही करता। इस कारण इसका उपयोग किसी-न-किसी मस्जिद के निर्माण में ही होगा।' कहते हैं कि भद्रावती नगर के बाहर समुद्र तट पर आज भी वह भव्य मस्जिद खड़ी है। जब वह मस्जिद बनकर तैयार हुई तो उसका उद्घाटन करवाने के लिए, पहली नमाज अदा करवाने के लिए नुरुद्दीन को आमंत्रित किया गया और तब नुरुद्दीन ने पहली नमाज अदा की।

नुरुद्दीन ने कहा—'जगडू शाह, तूने अपने त्याग से सारी इस्लाम-कौम में वह जगह बनाई है, जिसे बनाने में हजारों-हजार वर्ष लग जाया करते हैं।' वह नीला पत्थर उस मस्जिद के प्रवेश-द्वार पर जड़ा गया। हिन्दुस्तान में यही ऐसी मस्जिद है जो हिन्दू लोगों द्वारा मुसलमानों के लिए बनाई गई थी। जगडू शाह मस्जिद बनाकर अमर हो गए। आदमी, आदमी के साथ जीकर आदमी के लिए सदा-सदा अमर हो जाया करता है।

बातें बहुत छोटी-छोटी होती हैं, इतनी छोटी कि जैसे बादल से बरसी हुई कोई बूँद हो; जैसे नदिया की कोई धार हो, जैसे बरगद का कोई बीज हो; जैसे कला

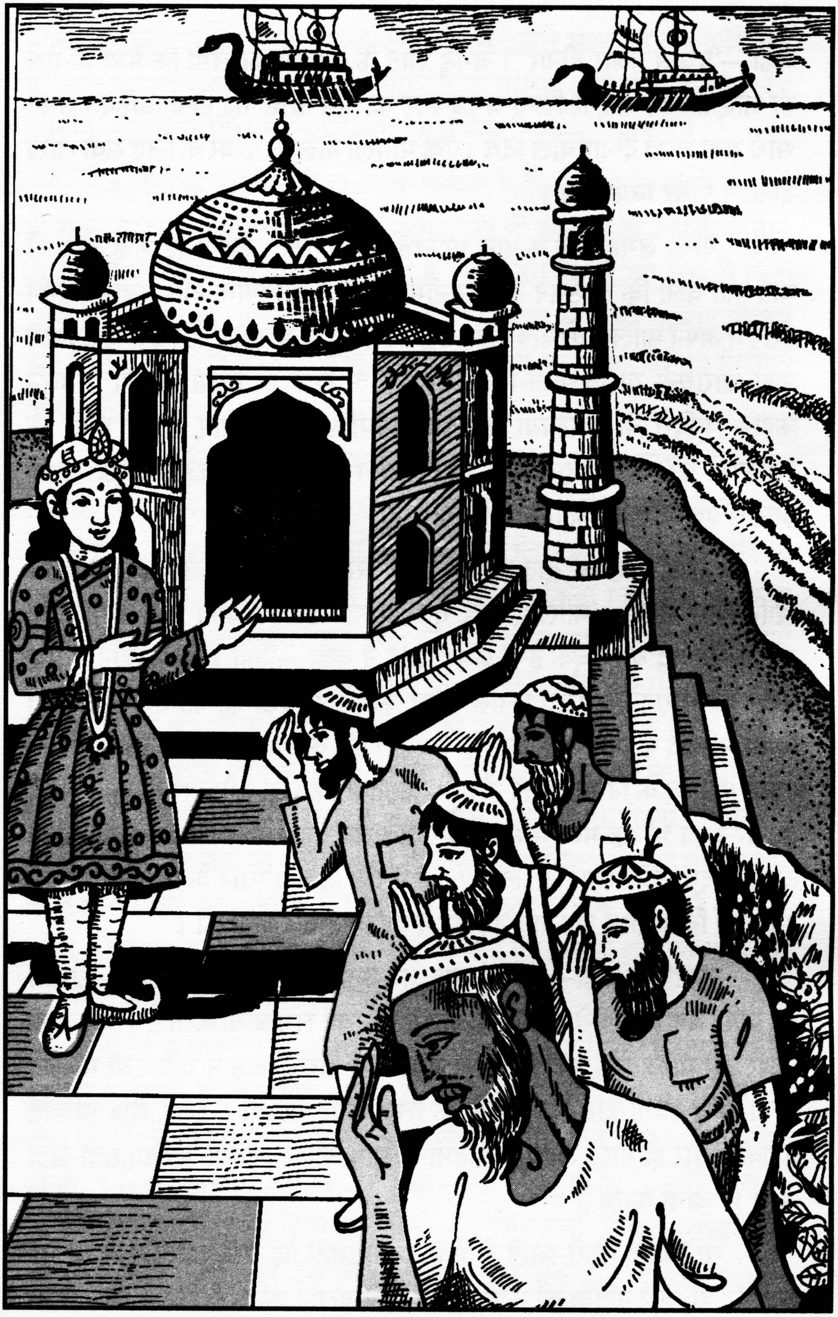

हिन्दुस्तान में यही ऐसी मस्जिद है, जो किसी हिन्दू द्वारा मुसलमानों के लिए बनाई गई।

के नायाब नमूने के लिए छोटी-सी कोई कल्पना हो । आदमी उन छोटी-छोटी बातों को जीकर ही सच्चा आदमी बनता है और आदमी, आदमी के दिल में अपनी जगह बनाता है ।

स्वभाव हो सौम्य

हम औरों के दिलों में अपनी जगह कैसे बनाएँ, इस सन्दर्भ में कुछ बेहतरीन चरण लें । हम जो पहला चरण लेंगे, वह है—स्वभाव में सौम्यता हो । स्वर्ग उन्हीं के लिए होता है, जो अपने घमण्ड और गुस्से को काबू में रखते हैं तथा जो गलती करने वालों को माफ कर दिया करते हैं । जो दयालु और क्षमाशील होते हैं, उनसे केवल आदमी ही प्यार नहीं करता, भगवान भी प्यार किया करते हैं । जिस आदमी के स्वभाव में सरलता और सौम्यता है, चित्त में एक सदाबहार शांति है, वह साधारण आदमी नहीं होता, बल्कि धरती के लिए देवदूत के समान होता है । वह आदमी औरों के दिलों में अपनी जगह बना ही लेता है, जिसका स्वभाव बड़ा सौम्य है, सरल है, कोमल है ।

हम जरा अपने स्वभाव को देखें कि वह सौम्य है या क्रूर, क्रोधित है या शांत, विनम्र है या घमंडी । कहीं ऐसा तो नहीं है कि ज्यों-ज्यों हमारे पास पैसा बढ़ता है, शिक्षा और ज्ञान बढ़ता है, समाज में मान-प्रतिष्ठा बढ़ती है, त्यों-त्यों हमारा घमंड भी बढ़ता चला जाता है । याद रखें, घमण्डी का सिर हमेशा नीचा ही होता है । जिंदगी भर भले ही हम दंभ पाले रहे, लेकिन मौत के आगे तो सिकंदर भी परास्त हो जाया करता है । एक पेड़ खजूर का होता है, जो इतना ऊँचा उठता है कि उसके फल हर किसी की पहुँच के बाहर हो जाते हैं । दूसरा पेड़ आम का होता है, जिसके फल आदमी की पहुँच के भीतर होते हैं । जब उस पेड़ के फल पकते हैं, तो पेड़ झुक जाता है । ज्ञानी की पहचान यह नहीं है कि वह घमण्डी हो, वरन् जो झुकना जानता है, वही ज्ञानी है । पैसे वाला वह नहीं है, जो पैसे को पाकर समाज को कुछ न समझे, पैसे वाला वह है जो औरों के बीच में जाकर अपने आपको उनके आगे और अधिक विनम्र कर लेता है । वह व्यक्ति संपत्तिशाली नहीं है, जो किसी मंदिर में प्रतिष्ठा करवाने के लिए खुद बोली ले और अपने हाथों से भगवान की मूर्ति चढ़ाए । वह आदमी असली नगरसेठ कहलाता है जो बोली स्वयं लेता है, लेकिन मूर्ति किसी और के हाथों से विराजमान करवाता है ।

क्रोध और अहं : स्वभाव के दुर्गुण

जो जितना झुकता है, समाज उसको उतना ही माथे पर बिठाता है और जो जितना अकड़ रखता है, वह समाज की नजर में उतनी ही नफरत का पात्र बनता है। आदमी के स्वभाव के दो दुर्गुण हैं—एक है घमण्ड और दूसरा है गुस्सा; एक है अहंकार और दूसरा है क्रोध। जिसका स्वभाव सौम्य हो चुका है, उस व्यक्ति को तो अगर गाली भी दी जाती है तो जवाब में बुद्ध जैसे लोग यही तो कहते हैं—धन्यवाद ! तुम मुझे जरा एक बात बताओ कि अगर कोई आदमी तुम्हारे घर मेहमान बनकर आए, तुम उसे भोजन परोसना चाहो और वह यदि भोजन स्वीकार न करे तो वह भोजन किसके पास रहेगा ? इसी तरह मैं भी तुम्हारी गालियों को स्वीकार नहीं करता। अब बताओ, तुम्हारी गालियों का क्या हश्र होगा ? गाली तो तब गाली बनती है जब हम गाली को स्वीकार करते हैं। गाली को स्वीकार ही न किया, उस पर ध्यान ही न दिया तो गाली वहीं पर खत्म हो गई। आग तब आग बनेगी जब उस आग को और ईंधन दिया जाएगा। आग तालाब में जाकर गिरेगी तो बुझ जाएगी। हमारा स्वभाव अगर सौम्य हो चुका है तो हम अपने आप में सागर हो गए।

अगर हम गाली को स्वीकार कर बैठे, तो स्वयं उलझ गए, फँस गए। इससे हमारा ध्यान उलझा, मन-हृदय उलझा। ध्यान रखें, पल भर का क्रोध आदमी का सारा भविष्य बिगाड़ सकता है। आदमी आठ प्रहर में जितना भोजन करता है, उसकी सारी ऊर्जा एक बार के क्रोध से नष्ट हो जाती है। जिस तरह कोई आदमी कहता है कि उसने भोग का उपयोग किया तो ऐसा करने से उसके शरीर का बल क्षीण हुआ तो गुस्सा करने वाले व्यक्ति का बल भी ठीक उसी कदर विनष्ट हो जाता है। बस, तरीका बदल जाता है, उत्तेजना तो वही की वही है। एक ही उपाय है कि आदमी सौम्य स्वभाव का स्वामी बने। उसके स्वभाव में हर क्षण सौम्यता हो। स्वभाव में सरलता, कोमलता, मृदुता श्रेष्ठ व्यक्तित्व के चरण हैं।

वाणी हो मधुर

स्वभाव में सौम्यता लाने वाला दूसरा सूत्र है—वाणी में मधुरता हो, ताकि आदमी औरों के दिलों में सहजतया अपनी जगह बना सके। मधुर वाणी शीतल पानी की तरह होती है, वहीं गर्म वाणी गर्म पानी की तरह। पानी गर्म हो, तो हाथ

जल जाता है, वाणी गर्म हो, तो हृदय ही झुलस जाता है । अगर आदमी कटुता और चिड़चिड़ेपन के साथ बोलता है, तो कौन आदमी उससे बात करना चाहेगा ? मूल्य इस बात का उतना नहीं है कि आप क्या बोले, बल्कि इसका मूल्य अधिक है कि आप किस तरीके से बोलें, कितनी मिठास के साथ हमने वाणी का उपयोग किया ? व्यक्तियों की कुलीनता उस समय पता नहीं कहाँ चली जाती है जब वे बात-बेबात गालियों का उपयोग करते हैं । गाली उनके लिए तकिया-कलाम बन जाती है । वे होली के दिनों में भी गालियों का इतना प्रयोग नहीं करते, जितना आम दिनों में ।

कहते हैं पहले लोग मिठाई बहुत खाते थे । माना, वे मिठाई खाते थे, पर वे वापस मिठास का उपयोग भी करते । आपको डायबिटीज क्यों है ? इसलिए कि मीठा तो खाते हो, पर वापस मिठास व्यक्त नहीं करते । तुम स्वभाव में मिठास ले आओ, जीवन की हर तरंग में माधुर्य का संचार कर दो, विश्वास रखो, तुम्हारी समस्या हल हो जाएगी ।

जो आदमी अपनी जुबान पर नियंत्रण नहीं रख पाता, उससे यह उम्मीद नहीं रखी जा सकती है कि वह किसी चींटी को भी बचा पाएगा । जिस आदमी के पास भाषा-समिति का उपयोग नहीं, क्या वह एषणा समिति का उपयोग कर पाएगा ? बोलो, मगर प्यार से बोलो । बेमतलब कुछ भी मत बोलो । कोई सलाह माँगे तो दो, वरना मौन रहो । कम बोलना चाहिए जैसे कि कोई आदमी तार देता है, बिलकुल नपे-तुले शब्द हों । अगर व्यक्ति संतुलित शब्दों में अगले तक अपनी बात पहुँचाएगा, तो उसकी ऊर्जा बची रहेगी । एक आदमी दिन में चार बार रोटी खाकर जितनी ऊर्जा बनाता है तो वह केवल एक बार में ही पर्याप्त हो जाएगी, क्योंकि आदमी में ऊर्जा को खर्च करने के लिए जो रास्ते होते हैं, उन पर उसने अपना संयम ले लिया, अपना अंकुश लगा लिया ।

प्यार से बोलो, मिठास से बोलो । एक बार एक महानुभाव कन्हैयालाल सेठिया, बड़े चर्चित कवि हैं, हम सब लोगों के पास बैठे हुए थे । उन्होंने कहा—'संत आदमी कितना संत होता है, यह तो हम नहीं कह सकते, मगर आपका बड़ा भाई पक्का संत है ।' मैंने पूछा—कैसे ? वे बोले—'कल मैंने इस आदमी को फोन पर सौ गालियाँ दी होंगी', मगर वे मेरी अन्तिम टिप्पणी पर भी शांत रहे और आखिर में बोले—'हाँ सा ।'

जिस आदमी का स्वभाव इतना सौम्य और मधुर है, जिसकी वाणी में जैसे मिश्री घुली हुई है कि जो सौवीं गाली के जवाब में भी 'जी हाँ' कहता है, वह व्यक्ति सचमुच सन्त ही है । सन्त का अर्थ होता है शान्त होना । जो आदमी शान्त है वह सन्त है । हमारी वाणी में ऐसी मधुरता होनी चाहिए । वाणी का मिठास, आह, इससे बेहतरीन पुष्पहार क्या होगा ! किसी भी बुद्धिमान-समझदार व्यक्ति की यह सबसे प्रभावशाली निशानी है ।

व्यवहार हो शालीन

मैं तीसरा सूत्र देना चाहूँगा—व्यवहार में शालीनता । यह कोई सामान्य बात नहीं है कि आप किस तरह से उठ रहे हैं, किस तरह से बैठ रहे हैं, किस तरह से सो रहे हैं । आपका चलना, सोना, बैठना भी दूसरों को प्रभावित करता है । आपका व्यवहार आपकी पहचान का आधार है ।

शालीनता का मंत्र इसलिए है कि आदमी सलीके के साथ देखे, फिर बैठे । ऐसा न हो कि वह आए और धड़ाम से बैठ जाए । बैठना है तो शालीनता के साथ बैठो । खाना है तो सलीके से खाओ । ऐसा न हो कि खाते समय आपके सारे दाँत दिखें । किसी के प्रति अगर आँख उठाकर देखना भी है तो इतने प्यार से देखा जाए कि उसमें सौम्यता झलके । ऐसा न हो कि दृष्टि से लोफर लगो । क्या आपने कभी सोचा है कि 'लुच्चा' शब्द कहाँ से आया है ? लोचन से ही लुच्चा बना है । जो लोचन को कहीं पर भी गाड़कर देखता है, वही लुच्चा है । देखना है तो प्यार से देखो, तरीके से देखो ।

घर में कोई आता है तो सलीके के साथ बात करो, बच्चों को शालीनता सिखाएँ । मैं एक घर में आहार के लिए गया था कि इतने में एक बच्ची आई और मम्मी से कहने लगी—मम्मी, मैं जहाँ भी जाती हूँ, छोटा भैय्या वहीं आकर खड़ा हो जाता है । यह भी कोई तरीका है ? वह यह बोलकर अपनी कार से रवाना हो गई । बच्चों को शालीनता सिखानी चाहिए कि जब चार लोग हमारे सामने बैठे हों तो हम किस तरह से पेश आएँ ।

एक छोटा-सा प्रसंग है । हम सूरत में थे । कोई आवश्यक बैठक आहूत थी, जिसमें दो ऐसे आदमियों को आमंत्रित किया गया था, जिनमें से एक लखपति था तो दूसरा अरबपति । एक हवाई जहाज से पहले आ गए । वे हमारे पास बैठे

थे, नाम था—मोहन चंद ढड्ढा । दूसरे व्यक्ति ट्रेन से आए । वे दरवाजे तक पहुँचे होंगे कि श्री ढड्ढा उनके सम्मान में खड़े होकर दरवाजे तक गये और उन्होंने उनके हाथ का सूटकेस खुद लेना चाहा । एक साठ वर्षीय अरबपति का पैंतीस वर्षीय लखपति के प्रति ऐसा व्यवहार देखकर मैं अभिभूत हो गया । इसे ही कुलीनता कहते हैं कि उस आदमी ने अपना पैसा, अपनी उम्र और प्रतिष्ठा को एक किनारे रखा और आए हुए व्यक्ति को खड़े होकर सम्मान दिया । सचमुच, ऐसा करके उन्होंने औरों के दिलों में अपना आदरपूर्ण स्थान बनाया ।

जब राम के सामने रावण का शव लाकर रखा गया तो विभीषण, मंदोदरी सभी यही सोच रहे थे कि राम इसके भी इतने टुकड़े करवाएगा कि शायद उससे ज्यादा टुकड़े न हो सकें और उन टुकड़ों को कुत्तों-गीदड़ों के आगे फेंक देगा, क्योंकि उसने राम की पत्नी पर गलत नजर डाली थी, मगर ऐसा कुछ नहीं हुआ । राम खड़े हुए, उस शव को देखकर सामने गए, करबद्ध हुए और अपने शरीर का उत्तरीय वस्त्र उतारकर रावण पर डाल दिया । इसे कहते हैं शालीनता और मर्यादा । मंदोदरी और विभीषण की आँखों से आँसू बह निकले । ऐसा हो आदमी का बर्ताव । मैं राम की शालीनता और मर्यादाओं का कायल हूँ । सार बात समझ लें—

सलीके का मजाक अच्छा, करीने की हँसी अच्छी,
अजी जो दिल को भा जाए, वही बस दिल्लगी अच्छी ।

रिश्तों में हो अपनापन

अगला सूत्र है—रिश्तों में आत्मीयता हो । आदमी बड़े प्यार से जिए, यह मानकर कि जीवन अपने आप में प्रकृति की अनुपम सौगात है । रिश्ता बनाना सरल होता है, निभाना बड़ा कठिन होता है । रिश्ते भले ही कम बनाओ, कोई चिन्ता नहीं, लेकिन जितने रिश्ते बनाए हैं, उन्हें निभाओ । वक्त/बेवक्त में काम आओ । यह बेवक्त ही आत्मीयता की कसौटी होता है । रिश्तों में आत्मीयता होनी चाहिए, केवल औपचारिकता नहीं, टी. वी. वाली मुस्कान नहीं । अगर आप किसी आत्मीय जन के अस्वस्थ होने पर अस्पताल जाते हैं, तो ऐसा न हो कि आपने कुशल-क्षेम पूछी और पाँच मिनट में लौट आए । इससे तो अच्छा होता कि आप वहाँ जाते ही नहीं । वहाँ गये हो तो तीन-चार घंटे बैठो, इस दौरान जो भी सेवा बनती है, आप सेवा करें । चाहे उसको निवृत्ति के लिए जाना हो या उसकी करवट बदलवानी हो,

बिना किसी शर्म के आप उसकी सहायता करें । सुख-शान्ति पूछने से सुख-शान्ति नहीं होगी । सुख-शान्ति आपके सहयोगी बनने से ही आएगी ।

किसी रोगी से सुख-साता पूछने की बजाय मालूम करें कि उसे किसी चीज की जरूरत तो नहीं है । अगर उसकी स्थिति वाकई ठीक नहीं है तो उसके तकिये के नीचे पाँच सौ रुपयों के नोटों का एक लिफाफा गुपचुप रखकर रवाना हों । आदमी अपने रिश्तों को केवल औपचारिकता न बनाए वरन् आत्मीयता को वास्तविक तौर पर निभाने की कोशिश करे ।

अगर किसी की बेटी का विवाह हो रहा है और लगता है कि वह विवाह का खर्च उठा पाने में समर्थ नहीं है तो आपने परिचय के नाते, रिश्ते के नाते या इंसानियत के नाते दस-बीस हजार का गहना बनवाकर उसे दे दिया तो इससे आपके कोई फर्क नहीं पड़ेगा, मगर वह व्यक्ति जिंदगी भर के लिए आपका अहसानमंद हो जाएगा, जिंदगी भर आपको याद करेगा । इस तरह से आदमी, आदमी के दिल में अपनी जगह बना लेता है ।

इबादत हो इंसानियत की

पंचम सूत्र यह है कि आदमी केवल अपने रिश्तेदारों के प्रति ही आत्मीयता न रखे, वरन् हर आदमी के क़ाम आए । आदमी का आदमी के लिए काम आना ही आदमियत की आराधना है, इंसानियत की इबादत है । कल की ही बात थी कि एक महानुभाव हमारे पास आये और बोले—'क्षमा करें आने में देरी हो गई ।' हमने कारण पूछा तो उन्होंने बताया—'रास्ते में एक आदमी दुर्घटना का शिकार होकर लथपथ पड़ा था, भीड़ लगी हुई थी । मैं भी उसे देखने खड़ा हो गया । वह तड़प रहा था, लेकिन उसे अस्पताल ले जाने वाला कोई न था ।'

उस महानुभाव की बात सुनकर मैंने कहा—'जब उस घायल को कोई भी अस्पताल ले जाने वाला नहीं था, तो आप उसे ले जा सकते थे । संभव है कि कल हम भी दुर्घटनाग्रस्त हो जाएँ और लोग हमारा भी तमाशा देखें ।' हर घायल के प्रति, हर जरूरतमंद के प्रति आदमी की सहानुभूति होनी ही चाहिए । वे ही हमारी सहानुभूति के असली पात्र हैं । उसने कहा, आपकी बात सर-आँखों पर, इसीलिए आने में देर हुई ।

साधुवाद ! तुम्हारी सहानुभूति किसी पुण्यात्मा के प्रति ही नहीं अपितु किसी

पापी के प्रति भी होनी चाहिए, क्योंकि वह समाज के द्वारा उपेक्षित है । मंदिर भी केवल पुण्यात्माओं के लिए ही नहीं होते; वरन् पापियों के लिए भी होते हैं, ताकि वे वहाँ जाकर अपने पापों को वहाँ समर्पित कर सकें, पापों का प्रक्षालन कर सकें । पुण्यात्माओं को तो अपने पुण्यों का फल भोगने के लिए हजार-हजार जगह हैं, लेकिन पाप से घिरे लोगों के प्रायश्चित के लिए तो वही एक शरणगाह है ।

आदमी के मन में पापियों के लिए सहानुभूति हो । जीसस कहा करते थे कि मैं इस धरता पर पुण्यात्माओं के लिए नहीं आया, वरन् पापियों को उनके पापों का प्रायश्चित कराने के लिए आया हूँ । मेरी जरूरत ज्ञानियों को नहीं, अज्ञानियों को है; पुण्यात्माओं को नहीं, उन निर्धनों और असहायों को है जिनकी सहायता के लिए और कोई आगे नहीं आता । आदमी, आदमी के काम आए और जाने कि इंसानियत का क्या मूल्य है, क्या अर्थ है ? वह जाने कि आखिर मानव-धर्म क्या है ? आदमी, आदमी के काम आए, औरों के दिलों में जगह बनाये ।

साकार हो सेवा की भावना

बात उन दिनों की है, जब टेरेसा ने अपने सेवा के संकल्प को भारत में क्रियान्वित करना शुरू ही किया था । शुरुआती दौर में उनका बहुत विरोध हुआ । पर वे सेवा में लगी रहीं । काली माता के मन्दिर का पुजारी, जो टेरेसा का कट्टर विरोधी था, हैजे का शिकार हो गया । मंदिर के बाहर पड़ा तड़फ रहा था । तभी टेरेसा की नन आयीं और पुजारी को स्ट्रेचर पर डालकर अस्पताल ले गयीं । बंगाली टेरेसा का विरोध करते हुए उस घर-चिकित्सालय के बाहर नारेबाजी कर रहे थे । इंस्पेक्टर, जिसने टेरेसा को कलकत्ता से निकालने का बीड़ा उठा रखा था, उसने जब टेरेसा को पुजारी की जिस कदर सेवा और उसके स्वास्थ्य के लिए ईश्वर से प्रार्थना करते देखा, तो उसकी आँखें भर आईं । उसने तब भीड़ से कहा—टेरेसा हमारे लिए एक प्रेरणा है—आदमी होकर आदमी के काम आने की । जिस दिन भारतीय नारियाँ इसी कदर सेवा के लिए आगे बढ़ आएँगी, यह सारा देश टेरेसाओं से भरा होगा । क्या हममें से कोई टेरेसा बनने को तैयार है ? आदर्शों की ऊँची बात करने वाले क्या सच्चाई की दहलीज पर कदम रखना चाहेंगे ?

होना होता है जिनको अमर,
वे लोग तो मरते ही आए ।

औरों के लिए जीवन अपना,
बलिदान वो करते ही आए ॥

धरती को दिये जिसने बादल,
वो सागर कभी न रीता है ।
मिलता है जहाँ का प्यार उसे,
औरों के जो आँसू पीता है ॥

क्या मार सकेगी मौत उसे,
औरों के लिए जो जीता है !
मिलता है जहाँ का प्यार उसे,
औरों के जो आँसू पीता है ॥

जिसने विष पिया बना शंकर,
जिसने विष पिया बनी मीरा ।
जो छेदा गया बना मोती,
जो काटा गया बना हीरा ॥

वो नर है जो है राम,
वो नारी है जो सीता है ।
मिलता है जहां का प्यार उसे,
औरों के जो आँसू पीता है ॥

जिस सागर ने धरती को बादल दिये हैं, वह कभी नहीं सूखता, जिस तरुवर ने लोगों को मीठे फल दिये हैं, वह तरुवर कभी वंचित नहीं रहता, जो सरोवर प्यासे कंठों की प्यास बुझाता है, वह कभी भी रीता नहीं रहता। जो औरों के लिए विष को भी अंगीकार करता है, वही तो शंकर कहलाता है। जीना उसी आदमी का जीना है जो आदमी होकर आदमी के काम आए।

○○○

प्रतिक्रियाओं से परहेज रखें

यह सारा जगत हमारा अपना ही आईना है। आईने में वैसी ही छवि उभरकर आती है, जैसा हमारा रूप-रंग-आकार होता है। क्रिया प्रतिक्रिया के अनुरूप ही होती है। कोई भी प्रतिक्रिया किसी भी क्रिया के विपरीत नहीं होती। यह सारा जगत ध्वनि और प्रतिध्वनि के नियम के आधार पर चलता है, कर्म और कर्म-परिणति के नियम के आधार पर संचालित होता है। यही जीवन और जगत का नियम है।

क्रिया मधुर हो, मधुर प्रतिक्रिया के लिए

जो व्यक्ति चाहता है कि उसके जीवन में प्रतिक्रियाएँ मधुर हों, उसे अपने जीवन में मधुर क्रियाओं का ही बीजारोपण करना होगा। दूसरों के द्वारा गीतों की सौगात पाने के लिए हमें गालियों से परहेज रखना होगा। यह जीवन-जगत की व्यवस्था है कि अगर तुम अपनी ओर से गीत गुनगुनाओगे तो तुम्हें औरों के द्वारा गीत ही लौटकर मिलेंगे। वहीं अगर गालियों की बौछार करोगे तो औरों के द्वारा गालियों के केक्टस ही तुम्हें भेंट में मिलेंगे। धरती पर आज तक किसी को काँटों के बदले में फूल नहीं मिले और किसी को फूलों के बदले में काँटे नहीं मिले हैं। महान् लोग औरों के द्वारा काँटों को बोये जाने के बावजूद उन्हें अपनी ओर से फूल ही लौटाते हैं। राम के भीतर तो राम के दर्शन हर कोई कर लेता है, मगर असली

भक्त तो वही है जो रावण में भी राम की छवि निहार ले।

यह जगत ध्वनि और प्रतिध्वनि के नियम से चलता है। जैसे जंगल में जाकर आप 'हो' की आवाज करें तो सभी दिशाओं से उससे चार गुना 'हो' की ध्वनि लौटकर आएगी। ऐसे ही अगर अपने द्वारा औरों के प्रति प्रेम के गीतों को बुलंद करोगे तो तुम पर प्रेम की ही बौछारें होंगी। अगर दूसरों से कहोगे कि मैं तुमसे नफरत करता हूँ तो यह जगत तुम पर चारों तरफ से नफरत के शोले बरसाना शुरू कर देगा। वहीं अगर तुम अपनी ओर से औरों के प्रति प्यार करने के भाव मुखरित करोगे तो ताज्जुब करोगे कि हर कोई तुमसे प्यार करने को लालायित नजर आएगा।

अगर कोई व्यक्ति आपको गाली-गलौच कर रहा है तो उसे बेवकूफ न समझें। दरअसल किसी के द्वारा मिलने वाली गालियाँ पूर्व में हमारी ओर से दी गई गालियों का वह प्रत्यावर्तन ही है। तुम अपनी ओर से जैसी सौगात दोगे, वैसी ही सौगात तुम बदले में पाओगे। पात्र बदल जाते हैं, निमित्त और चेहरे बदल जाते हैं मगर कुदरत हिसाब बकाया नहीं रखती, वह सूद समेत लौटाती है। अगर आज आपने गुलाबचंद को गाली दी है तो हो सकता है कि वह आपको गुलाबचंद के मुँह से गाली न निकलवाए, गुमानमल के द्वारा गाली लौटा दे। जैसा तुम बोओगे, वैसा ही काटने को मिलेगा। धर्मशास्त्रों में लिखे हुए कर्म के सिद्धान्त का इतना-सा ही रहस्य है।

मूल्य है स्वयं की दृष्टि का

दुनिया वैसी नहीं दिखती, जैसा कि हम उसे देखना चाहते हैं। दुनिया हमेशा वैसी ही दिखाई देती है जैसे कि आप स्वयं होते हैं। एक बुद्धिमान व्यक्ति किसी गाँव के बाहर रहा करता था। उधर से गुजरने वाले राहगीर उस गाँव के बारे में उसी से सवाल-जवाब किया करते थे। ऐसे ही एक राहगीर उधर से गुजरा। उसने रुककर बुद्धिमान व्यक्ति से बातचीत करनी चाही। उसने प्रश्न किया—'महानुभाव, क्या तुम मुझे यह बताना चाहोगे कि इस गाँव के लोग कैसे हैं? दरअसल मैं दूसरे गाँव में बसने की सोच रहा हूँ।'

तब बुद्धिमान व्यक्ति ने पूछा—'मैं तुम्हें तुम्हारे सवाल का जवाब दूँ उससे पहले मैं यह जानना चाहूँगा कि तुम जिस गाँव को छोड़ना चाहते हो उस गाँव के

लोग कैसे हैं ?' उस राहगीर ने कहा—'जिस गाँव में मैं रहता था, उसकी तो पूछो ही मत । वहाँ के लोग बड़े रूखे, निर्दय और बेहूदे हैं । इसी कारण तो मैं वह जगह छोड़ना चाहता हूँ ।' बुद्धिमान आदमी ने कहा—'तब तो यह स्थान भी तुम्हारे रहने योग्य नहीं है, क्योंकि यहाँ के लोग भी वैसे ही बदमिजाज हैं ।'

कुछ दिनों के बाद एक और राहगीर उधर से गुजरा । उसने भी वही प्रश्न बुद्धिमान व्यक्ति से किया—'जनाब, मैं इस गाँव के लोगों के बारे में आपकी राय जानना चाहता हूँ । मैं अपनी मौजूदा जगह छोड़कर कहीं और बसना चाहता हूँ ।' बुद्धिमान ने वही प्रश्न किया—'मैं तुम्हें तुम्हारे सवाल का जवाब दूँ उससे पहले मुझे जरा यह बताओ कि जिस गाँव को तुम छोड़ना चाहते हो, उस गाँव के लोग कैसे हैं ?' उस आदमी ने कहा—'श्रीमन्, उस गाँव के लोग बड़े दयालु, एक-दूसरे के सुख-दुःख में सहायक और सरलमना हैं ।' बुद्धिमान व्यक्ति ने कहा—'जनाब, इस गाँव के लोग भी वैसे ही दयालु, हमदर्द और उदार हैं । आप यहाँ बड़े प्रेम से निवास करें ।'

बुद्धिमान व्यक्ति का पुत्र दोनों राहगीरों की बातचीत का साक्षी था । उसे अपने पिता के व्यवहार पर विस्मय हुआ । उसने अपने पिता से पूछा—'आपके सामने अलग-अलग राहगीरों द्वारा एक ही प्रश्न पूछा गया, मगर आपने दोनों को अलग-अलग जवाब दिया, ऐसा क्यों ?' पिता ने कहा—'बेटा, आज तुम जीवन और जगत का यह विज्ञान समझ ही लो कि दुनिया वैसी नहीं दिखती जैसा कि तुम उसे देखना चाहते हो । दुनिया वैसी ही नजर आती है, जैसे कि तुम स्वयं होते हो । अगर तुम अपने आप में गाँव को रूखा, निर्दय और बेहूदा कहते हो तो निश्चय ही तुममें भी उतनी ही निर्दयता, उतना ही रूखापन, उतनी ही बेहूदगी होगी । अगर हम अपनी ओर से गाँव को बड़ा दयालु और शालीन-सलीके वाला समझते हैं तो जरूर हम भी वैसे ही होंगे ।'

संकल्प हो सद्व्यवहार का

तुम जैसे होते हो, वैसा ही तुम्हारे लिए जगत बन जाता है । प्रसन्न हृदय से अगर जगत को देखो तो सारा जगत मुस्कुराता हुआ दिखाई देगा और अगर रोते हुए चेहरे के साथ जगत को देखो तो सारा जगत रुँआसा, आँसू ढुलकाता नजर आएगा । यह तुम्हारी क्रिया की प्रतिक्रिया, छाया की प्रतिच्छाया, ध्वनि की प्रतिध्वनि

है । अगर चाहते हो कि औरों के द्वारा हमारे प्रति सद्व्यवहार हो, तो अपनी ओर से दृढ़प्रतिज्ञ बनो कि मैं अपनी ओर से किसी के प्रति दुर्व्यवहार नहीं करूँगा । अगर तुम चाहते हो कि तुम्हारे पिता अपना सारा प्यार तुम पर उँडेल दें, तुम भी अपना सारा सम्मान, संपूर्ण श्रद्धा उनके चरणों में समर्पित कर दो ।

हम याद करें उस दृश्य को जब महावीर के कानों में कीलें ठोकी गई थीं । वे कीलें अकारण नहीं ठोकी गई थीं । यह महावीर की क्रिया की प्रतिक्रिया थी । महावीर ने अपने पूर्व जन्म में अपने ही अंगरक्षक के कानों में खौलता हुआ शीशा डलवा दिया था । इस जन्म में रूप बदल गया, वेश बदल गया, लेकिन कर्म-बंधन नहीं बदले । आज अगर कोई तुम्हारी निंदा कर रहा है तो बड़े धीरज से उसे पचा लो, क्योंकि तुमने कभी किसी की निंदा की होगी । आज हमें लगता है कि हमारे घर में किसी छोटे बच्चे की मौत हो गई है तो हम यही मानकर चलें कि हमने भी कभी किसी छोटे बच्चे की मौत का निमित्त अपने द्वारा खड़ा किया होगा । यह आसमान हमें इसीलिए गोल दिखाई देता है कि हमें लौटाया जा सके वह सब कुछ, जो हमने अपनी ओर से ब्रह्माण्ड की ओर फेंका ।

क्या आपने कभी इस बात पर गौर किया है कि बड़े-बड़े मंदिरों के गुंबद गोल क्यों होते हैं ? इसके पीछे वैज्ञानिक तथ्य है । गुंबद गोल होने का कारण यह है कि हम जो मंत्राच्चार करें, वे ही मंत्र हम पर लौटकर बरसें और हमारे वायुमंडल को, हमारे रोम-रोम को, हमारे चित्त और हृदय के परमाणुओं को निर्मल करें । साथ ही कोई भी मंत्र व्यर्थ न चला जाए । अपने जीवन में जिन महानुभावों को भी यह अपेक्षा हो कि वे औरों के द्वारा माधुर्य पाएँ, सौम्यता पाएँ, तो उन्हें चाहिए कि वे औरों के साथ शालीनता से पेश आएँ । कोई और व्यक्ति आपके साथ दुर्व्यवहार करे, आपको गाली-गलौच करे, तब भी आपका फर्ज बनता है कि आप शांत-संयत रहें, प्रतिक्रिया व्यक्त न करें ।

कुलीन और संस्कारित व्यक्ति को निम्नस्तरीय व्यवहार शोभा नहीं देता । आदमी जब उठता है, बैठता है तो उसकी कुलीनता झलकनी चाहिए । कुलीनता का अर्थ यह नहीं है कि तुम किस सलीके से बोलते हो, किस सलीके से बैठते हो, किस सलीके से भोजन करते हो ? आपके खाना खाने का तरीका बता देता है कि आपका स्तर क्या है ? हम अपने हर व्यवहार के प्रति सजग रहें, जागरूक रहें । हमारी जागरूकता हमें व्यर्थ की प्रतिक्रियाओं में उलझने से बचाएगी ।

संतान नहीं, संस्कार भी

एक पिता अगर घर में बैठकर गाली-गलौच करता है, शराब और तंबाकू का सेवन करता है तो मानकर चलें कि उसका बेटा भी ऐसा ही सीखेगा। एक पिता वह होता है जो संतान को जन्म भर देता है; एक पिता वह होता है जो अपनी संतति को संपत्ति देता है और एक पिता वह होता है जा अपनी संतति को संस्कार देता है। अगर तुम झूठ बोलोगे, तो मानकर चलो कि वही संस्कार तुम्हारी संतान में आएगा और तुम्हारा बेटा भी झूठ ही बोलेगा। स्वयं का चरित्र सम्यक् उज्ज्वल रखकर हम अपनी आगे की पीढ़ियों में सम्यक् संस्कारों का संचार कर सकते हैं।

हम अपने जीवन को बड़ी सहजता, मधुरता और प्रमुदितता से जीएँ, इतनी सहजता के साथ कि जीवन हमारे लिए ईश्वर का वरदान बन जाए। केवल क्रिया-प्रतिक्रिया के दौर से गुजरते रहे तो ध्यान रखो, यहाँ जगत की व्यवस्थाएँ कुछ इतनी विचित्र हैं कि यहाँ क्रिया की प्रतिक्रिया कभी भी उतनी नहीं होती, जितनी तुमने क्रिया की है, बल्कि उससे कई गुना अधिक लौटकर आती है जैसे चार बीज बोओ, तो चालीस फल उग आते हैं, ऐसी ही गालियों की खेती है, जहाँ चार गालियों के बदले चालीस गालियाँ ही सुनने को मिलती हैं। आपने वह प्रसंग सुना ही होगा कि सम्राट् अकबर किसी जंगल से गुजर रहे थे। गर्मी की तपिश के कारण अपना कोट उतारकर बीरबल के कंधे पर रख दिया। अकबर के पुत्र को भी गर्मी लग ही रही थी, उसने भी पिता के पदचिह्नों का अनुसरण किया। उसने भी अपना कोट उतारकर बीरबल के कंधे पर रख दिया।

अकबर को मजाक सूझी। उसने कहा—'क्यों भाई बीरबल, एक गधे जितना भार तो हो ही गया होगा।' बीरबल ने कहा—'माफ करें हुजूर, एक का नहीं, दो का कहिए।' यह प्रतिक्रिया है। जगत वही लौटाता है, जो तुम उसे सौंपते हो। अगर किसी को गधा कहा तो मानकर चलें कि वह भी तुम्हें गधे से बढ़कर ही नाम देगा। गणित में तो शायद एक और एक दो होते हैं, लेकिन गालियों का गणित कुछ और है, जहाँ एक और एक, ग्यारह होते हैं; वे पल भर में एक सौ ग्यारह भी हो सकते हैं। इसलिए मेरे प्रिय आत्मन्, जीवन में अपनी ओर से सदा वे ही बीज बोए जाएँ, जिन्हें काटते वक्त हमें खेद, कटुता और वितृष्णा न हो।

सहानुभूति हो, सहिष्णुता भी

हमारे प्रति कौन-कैसा व्यवहार करता है, इस बात को कभी मूल्य मत दो। मूल्य सदा इस बात को दिया जाना चाहिए कि हम अपनी ओर से औरों के साथ कैसा व्यवहार करते हैं ? कौन हमें गालियाँ निकालता है, मतलब इसका नहीं है, वरन् मतलब इस बात का है कि हम अपनी ओर से गालियाँ निकालते हैं या गीत गुनगुनाते हैं। महत्त्व हमारा अपना है। कुछ लोगों को देखकर आश्चर्य होता है कि अमुक व्यक्ति उनके सामने आया, उसने सामने वाले की खूब निन्दा की, खूब बदनामी की, मगर वह उसके साथ उसी प्रेम, उसी सम्मान-भावना से पेश आ रहा है। यही तो उस व्यक्ति की सहिष्णुता है, इसी में उसकी सामायिक-भावना है कि जब कोई कैसा भी व्यवहार करे तो व्यक्ति सहनशील बना रहे, प्रतिक्रियाओं के द्वन्द्व से मुक्त रहे।

घर क्यों टूटते हैं ? एक माँ-बाप का खून आखिर क्यों बँट जाता है ? एक ही धर्म के अनुयायियों के बीच दरारें क्यों हैं ? इन समस्याओं की जड़ प्रतिक्रिया है। तुम्हारे भीतर मधुरता और सहनशीलता नहीं है, जिसके कारण समाज आपस में टूट जाता है, लोग आपस में बँट जाते हैं। कोई अगर पूछे कि घर और परिवार का पुण्य क्या है, तो मैं कहूँगा कि एक माँ-बाप के अगर पाँच संतानें हैं और वे सभी एक साथ, एक ही छत के नीचे बैठकर खाना खाते हैं। इससे बढ़कर परिवार के लिए और पुण्य क्या हो सकता है ? जिस परिवार के चार बेटे अलग-अलग घर बसा लें, तो माँ-बाप के लिए इससे बढ़कर त्रासदी और क्या हो सकती है ? यह धर्म-संघ का पुण्य होता है कि जहाँ वह एकछत्र, एक मंच पर खड़ा होता है। यह धर्म-संघ के लिए पापोदय है कि जहाँ संघ एक तीर्थंकर-एक ईश्वर-एक धर्म का अनुयायी होने के बावजूद अपने आपको खेमों में बाँट लेता है। नतीजतन एक धर्म का वही हश्र होता है, जैसे किसी मानचित्र के चार टुकड़े कर दिये जाएँ और उन्हें चारों दिशाओं में फेंक दिये जाएँ।

तोड़े नहीं, जोड़ें

रहिमन धागा प्रेम का, मत तोड़ो छिटकाय।
तोड़े से फिर ना जुड़े, जुड़े तो गाँठ पड़ जाय॥

प्रेम-भाव को तो हम और प्रगाढ़ करें । तोड़ें नहीं, जोड़ें । कभी-कभी लगता है कि खत्म हो गया है वह प्रेम जिसको लेकर धर्मों का जन्म हुआ । इंसानियत, एकता, भाई-चारा, विश्व-मैत्री का संदेश केवल प्रार्थनाओं और बैनरों पर टँगने और लिखने भर तक के लिए रह गया है, आम जीवन में इसका कोई उपयोग नहीं रहा है । धर्म उसका होता है जो इसको जीता है, प्रेम करता है । ईसाई वह व्यक्ति नहीं होता जो गिरजाघर में जाकर ईसा मसीह की प्रार्थना करता है, वरन् वह है जो ईसा के प्रेम को अपने जीवन में जीता है । वह व्यक्ति हिन्दू नहीं होता जो राम की पूजा करता है, वरन् वह व्यक्ति हिन्दू है जो राम की मर्यादाओं को अपने जीवन में आचरित करता है ।

महापुरुषों का स्मरण, पूजा, प्रार्थना खूब हो गई । मात्र इससे व्यक्ति का कल्याण नहीं होने वाला है । उनके गुणों को अपने जीवन में जीने से कुछ काम बनेगा । माना कि हम आसमान के चाँद-तारों को छू नहीं सकते, उन्हें पा नहीं सकते, मगर उनकी रोशनी में अपने रास्तों की तलाश तो कर ही सकते हैं । माना हम राम, कृष्ण, महावीर नहीं हो सकते, मगर उन जैसा होने का प्रयास तो कर ही सकते हैं, उनकी प्रेरणाओं को हम अपने जीवन का अंग तो बना ही सकते हैं ।

बचें, प्रतिक्रियाओं से

प्रतिक्रियाओं से परहेज रखो । जिसको-जब-जो करना है, उसकी माया वह जाने, तू तो अपनी सोच । तू तेरी संभाल, छोड़ सभी जंजाल । तू अगर औरों की सोचेगा तो अपने आपको डुबो बैठेगा । सब तिरें, सब पार लगें, यह अच्छी बात है, मगर तुम डूबे रहो यह कौन-सी बात हुई ? सारे लोग मुस्कुराएँ, यह अच्छी बात है, मगर तुम्हारे चेहरे पर मायूसी रुँआसापन रहे तो दुःखद है । तुम तो इस बात पर ध्यान दो कि तुम मुस्कुरा रहे हो या नहीं, तुम्हारे चित्त में प्रसन्नता उभर रही है या नहीं । अपनी ओर से जितनी कम प्रतिक्रियाएँ करोगे, उतनी ही अधिक सुख-शांति के स्वामी बनोगे ।

चित्त में शांति कोई ढिंढ़ोरा पीटने से नहीं आती । वह तो अपने आपको प्रतिक्रियाओं की उठापठक से मुक्त रखने से ही आएगी । लगभग तेरह-चौदह वर्ष हो चुके हैं, मैंने एक संकल्प लिया था कि सूर्यास्त से सूर्योदय तक मौन रहूँगा । चाहे जैसी परिस्थिति आए, चाहे जैसा वातावरण बन जाए, मैं हर हालत में मौन

रहूँगा । मैं जानता हूँ कि मेरे मौन ने मुझे कितना सुकून, माधुर्य, अन्तरात्मा का आनंद दिया है । अपने मौन के दौरान मैंने सदा यह बोध बनाये रखा कि चाहे दुनिया मरे या जिए, चाहे जलजला आए या कयामत; मैं हर स्थिति में शान्त और मौन रहूँगा । परिणामत: किसी भी तरह की प्रतिक्रिया मेरे चित्त में नहीं होती । मैं सहज ही शान्त हूँ, सुखी हूँ ।

मैंने मौन रहकर जाना है कि जो व्यक्ति अपने आपको प्रतिक्रियाओं से बचाकर रखता है, वह कितना सुखी है । उसके जीवन में सदा गुलाब के फूलों की सुवास रहती है । जो व्यक्ति अपने आप में हर प्रतिक्रिया के बदले में सकारात्मक और तटस्थ रहता है, उसकी मुस्कान में भी चाँद-तारों का सौंदर्य और फूलों की सुगंध रहती है । आप अगर चाहते हैं कि हकीकत में अपने मन में सामायिक और गीता के समत्वयोग को अपने जीवन में आचरित कर लें तो सीधा-सा सूत्र होगा—अपने आपको प्रतिक्रियाओं से मुक्त और निरपेक्ष रखें ।

दमन नहीं, सुधार हो

डाँट-डपटकर किसी को नहीं सुधारा जा सकता, न पिता अपने पुत्र को इस तरह सुधार सकता है, न सासें बहुओं को । अगर बेटे के द्वारा काँच की गिलास टूट जाए तो आग-बबूला होने की आवश्यकता नहीं है । आज क्रोध किया, गालियाँ निकालीं, तो संभव है, कल आपका बेटा भी क्रोध करेगा, संभव है कि वह आपके खिलाफ कोई विद्रोह कर दे । जब आपके पैर से फूलों का गुलदस्ता टूटा था, तब आपका बेटा शांत रहा था, आपकी मान-मार्यादा की रक्षा की थी, फिर आप क्यों इतने उतावले हैं ? याद रखें, किसी स्प्रिंग को जितना दबाओगे, स्प्रिंग उतनी ही बलवती होगी, वह उतने ही जोर से उछलेगी । थोड़ा धीरज रखो और बेटे को अवसर दो कि उसे अपनी गलती का अहसास हो, अपराध-बोध हो । तब वह मन-ही-मन कह उठेगा—'सॉरी, यह गलती फिर नहीं होगी ।'

किसी की चार गालियाँ किसी और को नहीं सुधार सकती, वरन् स्वयं में जगने वाला अपराध-बोध ही व्यक्ति को सुधारता है । तब आइंदा उसके पाँव से काँच की गिलास नहीं टूटेगी । होने वाली गलती के बोध का मौका दो । हाँ, अगर लगे कि दसों बार अवसर दिया, फिर भी वही गलती हो रही है तो तुम्हें डाँट-डपट का अधिकार है । पिता पुत्र से प्यार भी करे मगर उतना भी नहीं कि कल इसके

दुष्परिणाम उसे ही भोगने पड़ें।

मुझमें सामायिक और समता कैसे आई, कैसे मैं क्रोध और प्रतिक्रियाओं से उपरत हुआ, इसके पीछे एक प्रेरणा रही। सारे लोग जानते हैं कि भगवान कृष्ण के समक्ष शिशुपाल की माँ ने आकर कहा था—'भविष्यवाणी हुई है कि तुम शिशुपाल का वध करोगे। कृष्ण, मैं तुमसे आज यह वरदान चाहती हूँ कि तुम शिशुपाल का वध नहीं करोगे।' कृष्ण ने कहा—'बहिन, मैं ऐसा तो कोई वचन नहीं दे सकता हूँ। हाँ, इस बात के लिए जरूर आश्वस्त कर सकता हूँ कि मैं उसकी निन्यानवें गलतियों को माफ कर दूँगा।'

शिशुपाल की माता ने कृष्ण को धन्यवाद देते हुए कहा—'इतना भी बहुत है। निन्यानवें गलतियाँ तो बहुत होती हैं, मैं अपने बेटे को सदा सजग रखूँगी कि तुम कभी भी कृष्ण के प्रति कोई गलती मत कर बैठना।' लेकिन शिशुपाल एक पर एक गलती करता चला गया, प्रत्येक गलती को दोहराता चला गया। जिस दिन निन्यानवें गलतियाँ पूरी हुईं कि सौंवी गलती पर सुदर्शन-चक्र चल पड़ा। मैं इस घटना से प्रमुदित हो उठा। मुझे एक नया बोध मिल गया कि अगर कृष्ण किसी की निन्यानवें गलतियों को माफ कर सकते हैं तो हम किसी की नौ गलतियों को तो माफ कर ही सकते हैं। जिस व्यक्ति ने अपने जीवन में संकल्प ले लिया, वह बोध पा लिया कि मैं किसी की नौ गलतियों को जरूर माफ करूँगा, तो वह न कभी क्रोध की ज्वालाओं में झुलसेगा, न कभी प्रतिक्रियाओं में उलझेगा। वह अपने जीवन में चित्त की शांति का स्वामी बना रहेगा, सदा शांत और सौम्य बना रहेगा।

कमी न देखें और की

अगर आप चाहते हैं कि आप प्रतिक्रियाओं से बचे रहें, तो सदा इस बात का बोध रखें कि आप अपनी ओर से कभी किसी की कमी निकालें, न ही किसी की कमी का उसे बोध करायें। दुनिया में कोई विरला ही होगा, जो अपनी कमियों और गलतियों के बारे में जानना चाहता हो। अगर आपने किसी की गलतियाँ निकालनी शुरू कीं, तो बदले में वह आपको ऐसी-ऐसी गलतियाँ निकालना शुरू करेगा कि आपके लिए उन्हें पचाना कठिन होगा। ध्यान रखें कि कोई भी व्यक्ति अपने आप में पूर्ण नहीं होता, कमियाँ हर किसी में होती हैं। अगर कमियों की तरफ ध्यान दोगे तो तुम किसी व्यक्ति का उपयोग नहीं कर पाओगे। अगर गुणों की

तरफ ध्यान दोगे तो तुम गये-गुज़रे आदमी में भी गुण खोज ही निकालोगे, उनका भी उपयोग कर ही लोगे।

कुदरत हर इंसान में कुछ खास कमियाँ तो कुछ खास गुण देकर भेजती है। गुण इसलिए कि उस गुण के बलबूते पर आदमी अपना जीवन जी सके और कमियाँ इसलिए कि व्यक्ति अपने पुरुषार्थ के द्वारा उन कमियों को जीत सके। अपनी कमियों को हमें जीतना होता है और अपनी खासियत को हमें जीना होता है।

कभी भी किसी की निन्दा और आलोचना न करें। अपने मुँह से किसी भी तरह का कोई शब्द निकले तो पहले सोचें कि मैं कहूँ या न कहूँ। कहने के बाद केवल पछतावे के अलावा कुछ नहीं होता। **वाणी का उपयोग इस तरह करो कि तुम्हारी वाणी औरों को दिया जाने वाला फूलों का गुलदस्ता बन जाए।** जन्मदिन तो कभी-कभी आता है और तभी तुम किसी को फूलों का गुलदस्ता दे सकते हो, पर अपनी मधुर और सौम्य वाणी का गुलदस्ता रोज़ ही हर किसी को दे सकते हो। कभी भी किसी की आलोचना मत करो। माना कि किसी व्यक्ति के जीवन में कमियाँ होंगी, कुछ खामियाँ होंगी, पर अगर हमने उसकी खामियों को गिनना-गिनाना शुरू कर दिया, तो उसके जीवन का कचरा हमारे जीवन में आते देर नहीं लगेगी। जो व्यक्ति किसी की निंदा नहीं करता, उसे किसी तीर्थ की जरूरत नहीं रहती। वह घर बैठे गंगा-स्नान कर लेता है। उसके लिए कठौती में ही गंगा है, क्योंकि मन निर्मल है, मन चंगा है।

हम स्वयं तो किसी की निन्दा न ही करें, पर अगर कोई और व्यक्ति हमारी आलोचना करे, तो विचलित न हों। यह पड़ताल करें कि जो कहा जा रहा है, क्या उसमें कोई सच्चाई भी है। अगर सच है, तो स्वयं को सुधारें। अगर गलत है, तो चिन्ता किस बात की ! साँच को कैसा आँच ! भला, जब हम अपनी झूठी तारीफ भी प्रेम से सुन सकते हैं, तो अपनी सच्ची आलोचना को सुनने से क्यों कतराना ! शांति से आलोचनाओं का भी सामना करना आना चाहिए।

बिन माँगे सलाह कैसी !

ध्यान रखें, कभी भी किसी को बिन माँगे सलाह न दें। सीख उसी को दी जाए, जो सीख का सम्मान करता हो। कहा भी गया है कि बंदर को कभी सीख न

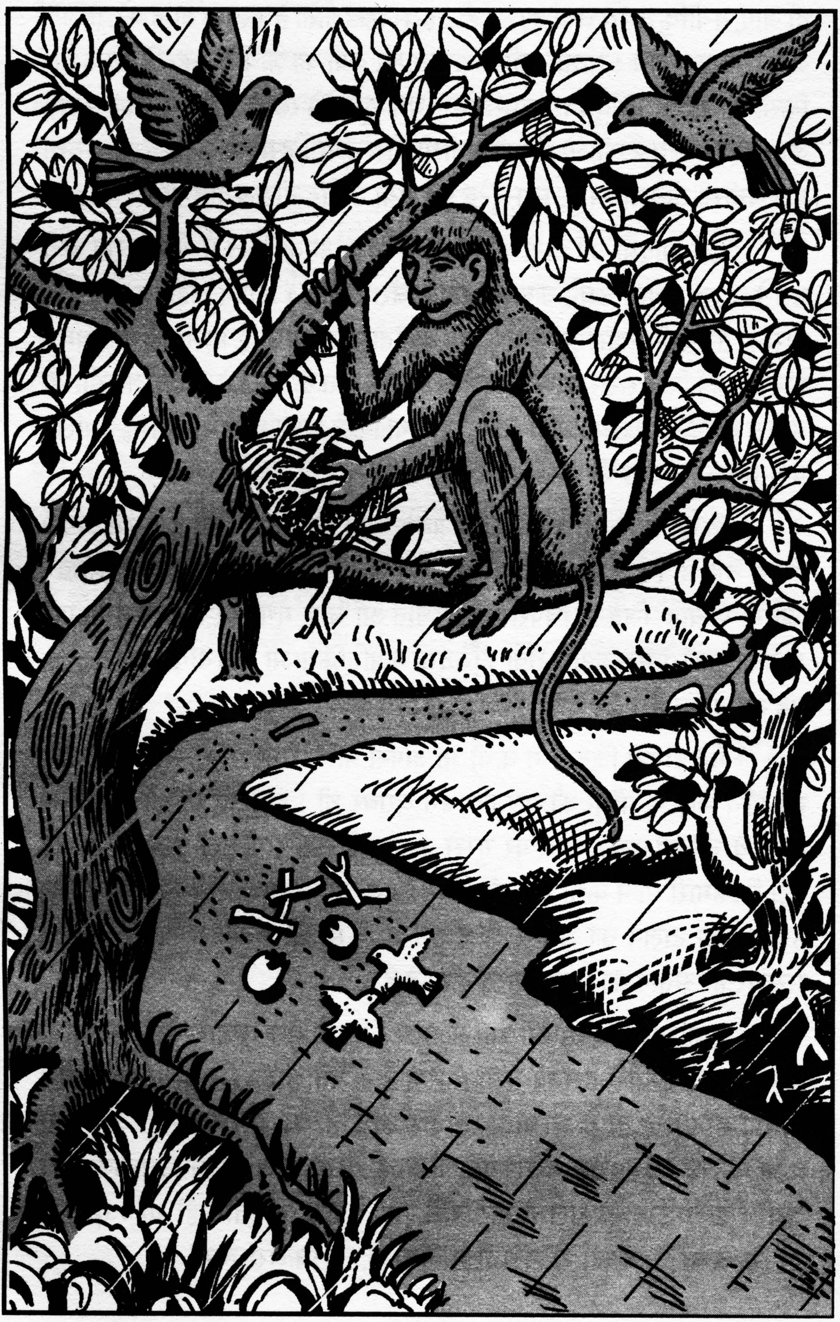

सीख उसी को दी जाए, जो सीख का सम्मान करता हो।

दी जाए, क्योंकि उससे बयां का घर ही तहस-नहस होता है । सीख वाहि को दीजिए, जाको सीख सुहाय । सीख न दीजे बान्दरा, घर बयां का जाय ॥ कहते हैं : एक बार किसी चौराहे पर दो युवक आपस में गुत्थम-गुत्थ हो रहे थे । एक ने कहा—अब ज्यादा ही बकवास की, तो मैं तेरी बत्तीसी तोड़ दूँगा । दूसरे ने कहा—जा, तू क्या मेरी बत्तीसी तोड़ेगा, अगर मेरा घूँसा पड़ गया तो तेरे चौंसठ दाँत तोड़ दूँगा ।

एक आदमी उन दोनों की बगल में खड़ा उनकी तू-तू मैं-मैं सुन रहा था । उससे न रहा गया । उसने कहा—जनाब, जरा रुकिये । आपने कहा कि मैंने घूँसा मारा तो तेरे बत्तीस दाँत टूट जाएँगे, यह बात तो समझ में आई, मगर यह बात समझ में नहीं आई कि दूसरे सज्जन के घूँसे से चौसठ दाँत कैसे टूटेंगे ? दाँत तो आखिर बत्तीस ही होते हैं । उसने कहा—मुझे पता था कि तू जरूर बीच में बोलेगा, इसलिए मैंने तेरे बत्तीस दाँत भी इसके साथ जोड़ लिये थे ।

किन्हीं दो के बीच तीसरे का प्रवेश सदा ही घातक होता है । बस अपना प्रयास यही हो कि तू तेरी संभाल, छोड़ शेष जंजाल । तू तेरे में मस्त रहना सीख । जिंदगी में चाहे जितनी विपरीत परिस्थिति आ जाए, मगर हर हाल में तुम अपने आपको सकारात्मक बनाये रखो । जिंदगी में प्रतिक्रियाओं से बचाये रखने के लिए यह अमृत मंत्र है ।

मैंने अपनी जिंदगी में कभी भी अपनी माँ के चेहरे पर गुस्सा नहीं देखा । हम पाँच भाई थे, पाँचों की उम्र लगभग बराबर थी । इसलिए माँ को तंग किया करते थे, लेकिन उसके चेहरे पर गुस्से की हल्की लकीर भी नहीं देखी । हमें याद नहीं कि हमारी माँ ने कभी हमें डाँटा हो । आज वह माँ साध्वी-जीवन में है, लेकिन उनका कहा टालने का साहस आज उसकी किसी भी संतान में नहीं है । उनके संस्कार हर संतान का मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं ।

एक बार मैंने अपनी माँ से पूछा कि माँ, मैंने तुम्हारे चेहरे पर कभी शिकन नहीं देखी । इसका क्या कारण है ? पता चला कि अगर बड़े लोग माँ को डाँट देते, तो वे सोचा करतीं कि ठीक है, बड़े हैं । बड़े नहीं कहेंगे तो कौन कहेगा ? विपरीत परिस्थितियाँ आईं, मगर फिर भी सकारात्मक और जब कोई छोटे बच्चे गलती कर जाते, तो वे उन्हें डाँटती नहीं थीं । सोचती थीं कि बच्चे हैं, बच्चों से गलती नहीं होगी, तो किससे होगी ?

निरपेक्ष रहें परिस्थितियों से

छोटों के प्रति दया और करुणा; बड़ों के प्रति चित्त में समता और सम्मान—यही है सदाबहार शान्ति और सौम्यता का मंत्र। व्यक्ति का सकारात्मक रूप यही है कि व्यक्ति विपरीत परिस्थितियों में सदा शांत रहे, सौम्य रहे, प्रसन्न रहे, वह हर हाल में मस्त बना हुआ रहे। जो व्यक्ति अपने जीवन में प्रतिक्रियाओं से परहेज रखता है, वह व्यक्ति चौबीसों घंटे सामायिक में है, समत्व में है। तब उसके चित्त में सदाबहार शांति और आनंद उसके भीतर बना हुआ रहता है।

जीवन में इतना बोध काफी है कि मैं प्रसन्न रहूँगा, ऐसी ही क्रियाएँ करूँगा जिनकी प्रतिक्रियाएँ सदा मधुर रहें; अगर किसी और के द्वारा गलत विचार, गलत टिप्पणी, कुव्यवहार हो भी जाए तो यह मानकर शांत रहूँगा कि जरूर अतीत में मैंने ऐसे बीजों का वपन किया होगा, तभी तो ऐसी प्रतिध्वनियाँ लौटकर आती हैं। भविष्य मेरा स्वर्णिम और मधुरिम है क्योंकि वर्तमान में ऐसे ही बीज बोता हूँ, ऐसे बीज-वपन और सिंचन के लिए सजग रहता हूँ जिनसे सुन्दर फूल खिलते हैं, छाँहदार पत्ते लगते हैं, रस भीने फल निपजते हैं। हाँ, यह जीवन-दृष्टि ही वर्तमान को शान्त और शालीन बनाती है और यही भविष्य के धरातल पर सुन्दर इन्द्रधनुष साकार करती है।

ooo

भय का भूत भगाएँ

आज अपनी बात एक प्राचीन घटना से प्रारंभ करूँगा। सम्राट संजय हरिणों का शिकार खेलने के लिए अपने नगर से रवाना हुए। कांपिल्य-नरेश ने सारे जंगल को छान मारा, मगर उन्हें शिकार नसीब न हुआ। उनका घोड़ा सरपट दौड़ता रहा। अचानक उन्होंने केशर-उद्यान में प्रवेश किया कि उनकी नज़र हरिणों के एक झुंड पर पड़ी।

घोड़े के टापों की आवाज़ सुनकर हरिणों में भगदड़ मच गई। वे भाग खड़े हुए। एक गर्भवती हिरणी तेजी से भागने में असमर्थ थी। वह पूरी कुलांचे नहीं भर पा रही थी। सम्राट संजय ने अपना तीर-कमान उठा लिया। तीर उसके हाथ से छूट पड़ा और सीधा गर्भवती हिरणी के पेट में जा धँसा। वह दर्द से कराह उठी, फिर भी दौड़ती रही। हिरणी आगे-आगे, सम्राट का घोड़ा पीछे-पीछे। अचानक हिरणी एक पेड़ की छाँव में पहुँची और वहाँ साधनारत संत गर्दभिल्ल के चरणों में जा गिरी।

संत के चरणों में घायल हिरणी ने अंतिम साँसें लीं। संत की आँखें खुलीं, तो अपने सामने एक मृत हिरणी को पाया। तभी देखा कि कोई शिकारी सम्राट, इसी हिरणी का पीछा करता हुआ इसी ओर चला आया है। सम्राट ने भी अपने

सामने एक संत, एक मुनि को पाया । सम्राट के कदम रुक गये । वह चौंका—ओह, मेरे द्वारा तो महान् अनर्थ हो गया । मैंने मुनि की हिरणी की हत्या कर डाली । अब मुझे निश्चय ही मुनि के अभिशाप का पात्र बनना पड़ेगा । संत का शाप कभी निष्फल नहीं जाता और आज मुझे ये शाप देकर ही रहेंगे ।

संत गर्दभिल्ल की दयाभरी दृष्टि हिरणी पर पड़ी । सारे संसार से निर्लिप्त और अनासक्त होने के बावजूद किसी को अपने पाँवों में गिरकर प्राणों की आहुति देते हुए देखकर संत की आँखें भर आईं । संत के हृदय से उमड़े उन आँसुओं ने हिरणी के मस्तक का अभिषेक किया। सम्राट संजय मुनि के पाँवों में गिर पड़ा—'मुझसे जो अपराध हुआ है, उसके लिए सम्राट अपना मुकुट आपके चरणों में रखकर माफी चाहता है । क्षमा करें, मुनिवर, क्षमा करें ।'

सम्राट की याचना सुनकर संत ने जो शब्द कहे, वे आज भी सामयिक व प्रासंगिक हैं । वे शब्द विश्व-शांति और प्रेम का आधार बन सकते हैं । संत ने कहा—'ओ पार्थिव, अगर तू किसी से अभय चाहता है तो तू स्वयं अभयदाता बन । इस अनित्य जीवलोक में तू क्यों हिंसा में आसक्त हुआ चला जा रहा है ? चार दिन का जीना तेरा है और चार दिन किसी अन्य का ही । इस चार दिन के जीवन में तू क्यों अपने आपको हिंसा, परिग्रह और वैमनस्य में झौंक रहा है ! अगर तू अपने लिए अभयदान चाहता है तो तू भी इन सारे निरीह प्राणियों का अभयदाता बन ।'

अहिंसा : अभय की नींव

हिंसा भय को जन्म देती है और अहिंसा अभय को । अहिंसा अभय की नींव है और अभय अहिंसा की अभिव्यक्ति । जो भयभीत है, उसकी अहिंसा कायरता है । जो निर्भय है, उसकी अहिंसा आत्म-गौरव है । यदि कोई भयवश ईश्वर को धोकता है, तो उसकी आस्थाएँ कभी भी खंडित हो सकती हैं । जो भय के कारण पाप से डरता है, उसके पुण्य में भी पाप छिपा रहता है । डरपोक लोगों को जीने का हक नहीं है । उन्हें लोग जीने भी नहीं दे सकते । भय का भूत भगे, तो ही सच्चाई का सूर्योदय सम्भव हो सकेगा ।

अहिंसा की विजय 'हिंसा की रोकथाम' के नारों से नहीं होती । जीवन में हिंसा का आमूलचूल मिटाव करने से ही अहिंसा की विजय संभावित है । सम्राट

अशोक कलिंग युद्ध में अपनी विजय के बाद तंबुओं में विजय का उत्सव मना रहा था । रात का घुप्प अँधेरा था, लेकिन अशोक के शामियानों में रोशनी जगमगा रही थी । तभी एक सेवक सम्राट अशोक के तंबू में प्रविष्ट हुआ और कहा कि कोई बौद्ध भिक्षु आपसे इसी समय मिलना चाहता है । सम्राट ने अनुमति दे दी । भिक्षु ने कहा—'सम्राट, आज विजय का उत्सव मनाया जा रहा है, लेकिन इस समारोह का उचित स्थान ये तंबू नहीं हैं । आप मेरे साथ चलिए, मैं आपको वहाँ ले चलता हूँ जहाँ विजय का असली उत्सव मनाया जाना चाहिए ।'

सम्राट अशोक भिक्षु के साथ चल दिये । भिक्षु सम्राट को कलिंग की रणभूमि में ले आया । युद्ध के प्रांगण में सम्राट को खड़ा करके भिक्षु ने कहा—'सम्राट, तुम किसका विजय-उत्सव मना रहे हो ? क्या इन अबलाओं के सिंदूर उजड़ जाने का, क्या इन बहिनों का अपने भाइयों से सदा-सदा बिछुड़ जाने का; क्या इन माताओं की गोद सूनी हो जाने का ? तुमने निर्दोष लोगों का कत्ल करके उचित नहीं किया है ।'

भिक्षु की बात सम्राट सिर झुकाए सुनता रहा । भिक्षु ने कहा—'सम्राट, यह सारी मानवता तुम्हें अपने शीश पर बिठाये रखना चाहती है । यह तभी संभव है जब तुम हिंसा न करो, अहिंसा की प्रतिमूर्ति बनो ।' तब एक ऐसे सम्राट का जन्म हुआ, जिससे अहिंसा गौरवान्वित हुई । तब धरती पर वह अशोक प्रकट हुआ जिसने शांति और अहिंसा के लिए अपनी सारी शक्ति, सारी संपदा का उपयोग किया । सम्राट अशोक अभय और अहिंसा का सम्राट कहलाया ।

एक ओर है संत गर्दभिल्ल, तो दूसरी ओर है भिक्षु बोधिसत्व; एक तरफ है सम्राट संजय तो दूसरी तरफ है सम्राट अशोक । सम्राट संजय ने जहाँ सदा-सदा के लिए शिकार को वर्जित कराया और समस्त निरीह प्राणियों के लिए अभयदान की घोषणा करवाई, वहीं सम्राट अशोक ने सम्पूर्ण साम्राज्य में अयुद्ध की घोषणा करवाई । एक ओर अहिंसा है और दूसरी ओर अभय । अहिंसा और अभय—दोनों एक दूसरे के पूरक हैं, एक दूसरे के पर्याय हैं ।

अहिंसा और अभय वीरों का आभूषण

अहिंसा और अभय भगौड़ों या पलयानवादियों का काम नहीं है । यह तो वीरों का आभूषण है । वह आदमी अपने जीवन में धर्म को नहीं जी पाता, जिसके

लिए 'अहिंसा परमो धर्मः' नहीं है । वह आदमी साधना को नहीं जी पाता जिसके जीवन में अभय-दशा उन्नत नहीं हुई है । साधना के द्वार पर तो यक्ष, किन्नर, देव, दानव और न जाने क्या-क्या, किन-किन के घोर परिषह, घोर उपद्रव आते हैं । भगवान महावीर पर केवल एक रात में बीस-बीस घोर उपसर्ग, घोर परिषह हुए थे ।

हम ज़रा अपनी साधना को, अपनी जीवन-शैली को, अपनी अहिंसा को कुछ ईमानदारी के साथ परखें । हमें पता चलेगा कि क्या हम किसी देव-दानव के दिये जाने वाले परिषह में कामयाब हो सकते हैं ? एक चूहे से, एक छिपकली से भय पाने वाला आदमी क्या किसी यक्ष, किन्नर, देव, दानव, भूत-प्रेत के उपद्रव को सहन कर पाएगा ? व्यक्ति जब लॉयन्स क्लब का सदस्य बनता है, तो लॉयन कहलाता है । सदस्य बनकर उसे स्वयं में छिपे हुए सिंहत्व को, पुरुषत्व को सार्थक करना होता है; मगर वह दीवार पर चलती हुई एक छिपकली से घबरा जाता है । वह आदमी 'शेर की संतान' कहलाने का अधिकारी नहीं है, जो एक छोटे-से कीड़े से घबरा जाए ।

साधना का सोपान : अभय

बहुत वर्षों पहले हमें हम्पी की कंदराओं में रहने का सौभाग्य मिला । वहाँ एक बहुत बड़े साधक हुए योगिराज सहजानंदघन । वे अपने पूर्व नाम से भद्रमुनि कहलाते थे । अब तो हम्पी में देशी-विदेशी पर्यटक दिन-रात पड़े ही रहते हैं, लेकिन मैं तो बात कर रहा हूँ पच्चीस-तीस साल पहले की । उस समय वे साधक अकेले ही वहाँ की कंदराओं में रहते थे । कोई भूला-भटका दर्शनार्थी ही उनके पास पहुँचता था । जब दस साल पहले हम हम्पी में थे, तो मैंने अपनी आँखों से वहाँ पर शेर, बाघ, साँप-बिच्छू देखे थे । ज़रा कल्पना कीजिए आज से पच्चीस-तीस साल पहले उस साधक ने कंदराओं में कैसे साधना की होगी ? ऐसी निर्भय दशा के, निर्भय चित्त के स्वामी को शायद ही मैंने देखा हो । मैं योगी सहजानंदघन की निर्भय चेतना से सहज ही प्रेरित-प्रभावित हुआ ।

मैं योगिराज शांतिविजय महाराज की भी निर्भय-दशा की अनुमोदना करूँगा । मुझे उनकी गुफाओं में भी जाने और रहने का अवसर मिला । व्यक्ति कोई भी क्यों न हो, ऐसे अभय चेतनाशील पुरुष ही सफलताओं की मीनारों को छू सकते

हैं । तेनसिंह और हिलेरी जैसे लोग, जिन्होंने एवरेस्ट की चढ़ाई की, मार्ग में सफेद भालू मिले, पर जिनके चित्त से भय भाग गया, अभय जग गया, भला, साँप, बिच्छु, भालू उनके भय का निमित्त कैसे बनेंगे !

व्यक्ति जानवरों से भयभीत रहता है, पर मैंने नहीं सुना कि आज तक किसी शांत बैठे हुए इंसान को किसी भी साँप ने काटा हो । कोई भी साँप इंसान को तभी काटता है, जब इंसान का पाँव सर्प पर पड़ जाये और सर्प भयभीत हो जाये । मैंने कई-कई बार अपने पास से सर्प को गुजरते हुए देखा है । जैसे ही पाया कि कोई साँप गुजर रहा है; जहाँ थे, वहीं खड़े हो गए । सर्प आया और पास से गुजर गया, आगे बढ़ गया । ज्यों ही आप सर्प से भयभीत होंगे, सर्प चौंक उठेगा और डंक मारेगा; कुत्ते से भयभीत होंगे तो वह पीछे दौड़ेगा, काट खाएगा ।

भूत : भय का पिछलग्गू

एक बार की बात है । कहते हैं कि स्वामी विवेकानंद बहुत डरा करते थे, जल्दी भयभीत हो जाते थे । एक बार वे किसी जंगल से गुजर रहे थे । चलते-चलते वे काफ़ी थक चुके थे, इसलिए वे एक पेड़ के नीचे पहुँचे विश्राम करने के लिए, मगर जैसे ही वहाँ लेटने लगे कि तभी देखा कि उस पेड़ के ऊपर आठ-दस बंदर बैठे हैं । जैसे ही बैठे कि ऊपर से एक बंदर नीचे आता दिखाई दिया । वे घबराए और वहाँ से दौड़ पड़े ।

स्वामी विवेकानंद के दिल की धड़कन बढ़ गई । जैसे ही वे दौड़े कि सारे बंदर नीचे उतर आये और उनके पीछे हो लिये । विवेकानंद आगे-आगे, बंदर पीछे-पीछे । दौड़ते-दौड़ते वे थककर चूर हो गये । अब उनसे दौड़ पाना कठिन था । वे वहीं खड़े हो गये । उनके खड़े होते ही बंदर जहाँ थे, वहीं रुक गये । चौंके, सूत्र हाथ लगा—मेरे रुकने से बंदर भी रुक गये । अगर मैं एक कदम इनकी तरफ बढ़ाऊँ तो क्या ये भी एक कदम पीछे चले जाएँगे ? उन्होंने साहस करके एक कदम बंदरों की तरफ बढ़ाया, बंदर पीछे हट गये । बस, जीवन में अभय दशा को लाने का सूत्र मिल गया कि तुम भय से भागो मत । भय अपने आप ही भाग जायेगा । तुम अभय हो जाओ । कहते हैं कि तब विवेकानंद बड़े आराम से चलकर उस वृक्ष के पास लौटे । बंदर धीरे-धीरे वृक्ष पर चढ़ गए । विवेकानंद आराम से उस वृक्ष के नीचे सोये, चैन की नींद ली ।

भय के भूत उतने ही सवार होंगे, जितने कि आप उन भूतों से घबराएँगे । जितने हम निर्भय होते चले जाएँगे, भय के भूत हमसे उतने ही भागते चले जाएँगे । कोई कहता है कि अमुक मकान में मत जाना, उसमें भूत रहते हैं । कोई कहता है कि रात को सोये-सोये ही मुझे भूत दिखाई देता है । कोई कहता है कि मैंने देखा अपने मौहल्ले में दूर एक सफेद-सा भूत हिल रहा था । उनसे पूछा जाये कि भूत हिल रहा था या किसी आदमी की धोती हिल रही थी ? दूर से भूत दिखाई देते हैं, लेकिन जैसे ही उसके पास जाओ; यथार्थ सामने आ जाता है, कथित भूत भाग जाता है ।

भय : मन का संवेग भर

आदमी सदैव भय से ग्रस्त रहता है । आखिर वे मूलस्रोत, मूल कारण क्या हैं, जिनके चलते आदमी भय की जकड़ में आता है ? फ्रायड को पढ़ो या दूसरे मनोवैज्ञानिकों को, वे कहते हैं कि मनुष्य जब से जन्म लेता है, भय की दशा उसके चित्त में सदा-सदा रहती है । मनुष्य अपने साथ मूलत: तीन संवेगों को लेकर जन्म लेता है—पहला है—प्रेम, दूसरा है—भय और तीसरा है—क्रोध । मनुष्य के संपूर्ण जीवन में ये तीन संवेग काम करते हैं ।

आपने पाया होगा कि जैसे ही बच्चा रोता है, माँ उसे छाती से लगाती है । प्रेम का संवेग उठा, उसकी पूर्ति हुई, बच्चा शांत हो गया । बच्चा सोया हुआ था कि तभी आपके हाथ से गिलास छूट गई, ज़ोर की आवाज़ हुई, बच्चा चौंक उठा, रो पड़ा । यह मनुष्य के भय का संवेग हुआ । आपने बच्चे के हाथ से उसका खिलौना छीन लिया, अब देखो बच्चा किस तरह से हाथ-पाँव पटकता है; किस तरह से छाती पीटता है । यह हुआ उसके क्रोध का संवेग । मनुष्य जन्म के साथ ही प्रेम, भय और क्रोध को लेकर आता है । हमारे अपने ही चित्त में प्रेम है, भय है और इसी में क्रोध है ।

भय से शक्ति का क्षय

भय मनुष्य का सबसे बड़ा घातक शत्रु है । विश्वास और विकास दोनों ही इससे कुंठित हो जाते हैं । भय मानसिक कमेजारी है । मन दुर्बल हो जाए, तो शरीर भी दुर्बल हो जाता है । निर्भय मन स्वस्थ शरीर का आधार बनता है । रोग कटते हैं मनोबल और आत्मविश्वास के बूते पर । इसलिए भय से मुक्त होना स्वस्थ

जीवन का सरलतम मंत्र है । जो किसी भी परिस्थिति में नहीं घबराते, वे भूत बंगले से भी नहीं घबराते । जो भयभीत हैं, वे अपने आस-पास हवा से हिल जाने वाले पत्तों से भी घबरा जाते हैं । इतना ही नहीं, तुम जैसे ही घबराते हो, तुम्हारी शक्ति का क्षय होना शुरू हो जाता है । तुम्हारा पाचन-तन्त्र, हृदय-तन्त्र भी असंतुलित हो उठते हैं । इसीलिए तो कहते हैं मन के हारे हार है और मन के जीते जीत । **अब तक जो भी हारे हैं, कमजोर मन के कारण हारे हैं और जो भी जीते हैं, वे अपने मनोबल के कारण जीते हैं । कमजोर शरीर और बलवान मन तो चल जाएगा, पर बलवान शरीर और कमजोर मन कभी भी कारगर नहीं हो पाएँगे ।**

निर्भयता की बीन बजाएँ

अगर डरना है तो अपयश से डरो, पाप से डरो, और किसी से डरने की जरूरत नहीं है । जब तक भय निकट न आया हो, तब तक ही उससे डरना चाहिए, पर आ जाने के बाद तो निःशंक होकर उस पर प्रहार कर देना चाहिए । तुम न मित्र से घबराओ, न परिवार से, न शत्रु से घबराओ, न भूत से । घबराना तुम्हारे स्वभाव में ही न हो । जहाँ घबराए, समझो लक्ष्य की नाव वहीं डूब गई ।

त्यागें, हृदय की नपुंसकता

भय से मुक्ति पाने के लिए पहले वे कारण तलाशने होंगे, जिनसे मनुष्य भयग्रस्त होता है । जहाँ तक मैं मनुष्य के मन को पढ़ पाया हूँ, उसके मुताबिक मनुष्य की पहली जो स्थिति बनती है कि जिसके कारण आदमी भयग्रस्त होता है, वह है मनुष्य की पौरुषहीनता, सत्त्वहीनता, मनुष्य के मन में पलने वाली नपुंसकता । स्वयं में अगर कायरता या नपुंसकता आ जाती है तो आदमी भयग्रस्त होता है । शक्तिहीन होने के विचार मात्र से व्यक्ति भयग्रस्त हो जाता है । जब महाभारत का संग्राम छिड़ने को था, तो अर्जुन जैसा सामर्थ्यवान व्यक्ति भी अपने शस्त्रों को नीचे गिरा बैठा । कृष्ण ने क्या किया ? केवल अर्जुन के चित्त में आ चुकी कायरता, नपुंसकता को दूर किया और गीता के रूप में एक महान् संदेश दिया ।

मुझ पर गीता का प्रभाव रहा है । मेरे हृदय में अभय का दीप जलाने में उसने मदद की है । ऐसा हुआ । बहुत वर्ष पहले की बात है । हम कच्चे रास्ते से माऊंट आबू पर चढ़ रहे थे, यात्रा चल रही थी । न जाने क्यों मुझे यह अहसास हो रहा था कि कुछ अनिष्ट होने वाला है । मैं निरन्तर सचेत, सजग रहा । मैंने सभी को

रोक लिया और निवेदन किया कि वापस सब लोग नीचे उतर जाएँ, क्योंकि मुझे कुछ अनहोनी-सी स्थिति लग रही है । काफी चढ़ाई चढ़ चुके थे, पर मेरे निवेदन पर सभी जन नीचे उतर आए।

तीन दिन बाद वापस चढ़ना शुरू किया । कोई छः से सात किलोमीटर की यात्रा पूरी की होगी कि अचानक तेज सनसनाहट के साथ हवा आई और उस तेज हवा के साथ एक भयंकर मूठ आकर मुझ पर गिरी । मैं वही धड़ाम से गिर पड़ा । मुँह से खून की उल्टी होने लगी । मैंने अपनी परा शक्ति का स्मरण किया । न जाने कहाँ से जलती हुई आग मेरे हाथों में आई और मैंने उस आग से मूठ की काट की । सारा रास्ता जैसे-तैसे कर पार हो गया । लेकिन फिर तो मेरी हालत यह हो गई कि मुझे लगता कि दिन हो या रात, कभी भी-किसी भी क्षण कुछ भी हो सकता है । मेरी सारी योग-शक्तियाँ लगाने के बावजूद मुझे लगा कि मेरे साथ कुछ ऐसा हो रहा है, जिसे मैं जीत नहीं पा रहा हूँ । मेरे चित्त में भय की ग्रंथि बन चुकी थी ।

बाद में तो स्थिति यह हो गई कि अगर मैं जंगल से भी गुजरता और तेज हवा भी चल पड़ती, तो मुझे लगता कुछ-न-कुछ गड़बड़ी है । मेरे लिए अब बड़ा मुश्किल हो गया । इसी तरह पाँच-छः महीने बीते कि तभी संयोग से मुझे एक ऐसी पुस्तक मिली कि मेरे मन का कायाकल्प हो गया। यह किताब थी—श्रीमद्‌भगवद्‌गीता । मैंने उसे खोला, दृष्टि दूसरे अध्याय के एक श्लोक पर जा टिकी । उस श्लोक ने मेरे चित्त की अभय-दशा को जाग्रत कर दिया; मेरी अन्तरात्मा में पुरुषत्व को जगा दिया । मेरे मन में घर कर चुकी नपुंसकता दूर हो गई ।

मैंने स्वयं यह संकल्प लिया, खड़ा हुआ और कहा कि देखता हूँ अब कौन-सी ताकत है जो मुझसे बढ़कर निकल सके । गीता का वह श्लोक मेरे जीवन के पुरुषार्थ को जगाने का परम आधार बना । वह सूत्र था—

क्लैव्यं मा स्म गमः पार्थ, नैतत्त्वय्युपपद्यते ।
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं, त्यक्त्वोतिष्ठा परंतपः ॥

कृष्ण ने कहा—'ओ मेरे पार्थ, अपने हृदय की तुच्छ दुर्बलता का त्याग कर । क्यों तू अपने आपको नपुंसक बना रहा है ? खड़ा हो और देख, तुझे युद्ध के लिए पुकारा जा रहा है । तू अपने कर्त्तव्य के लिए सन्नद्ध हो जा । जाग्रत हो और अभय-दशा को प्राप्त कर । मैं तुम्हारे साथ हूँ ।'

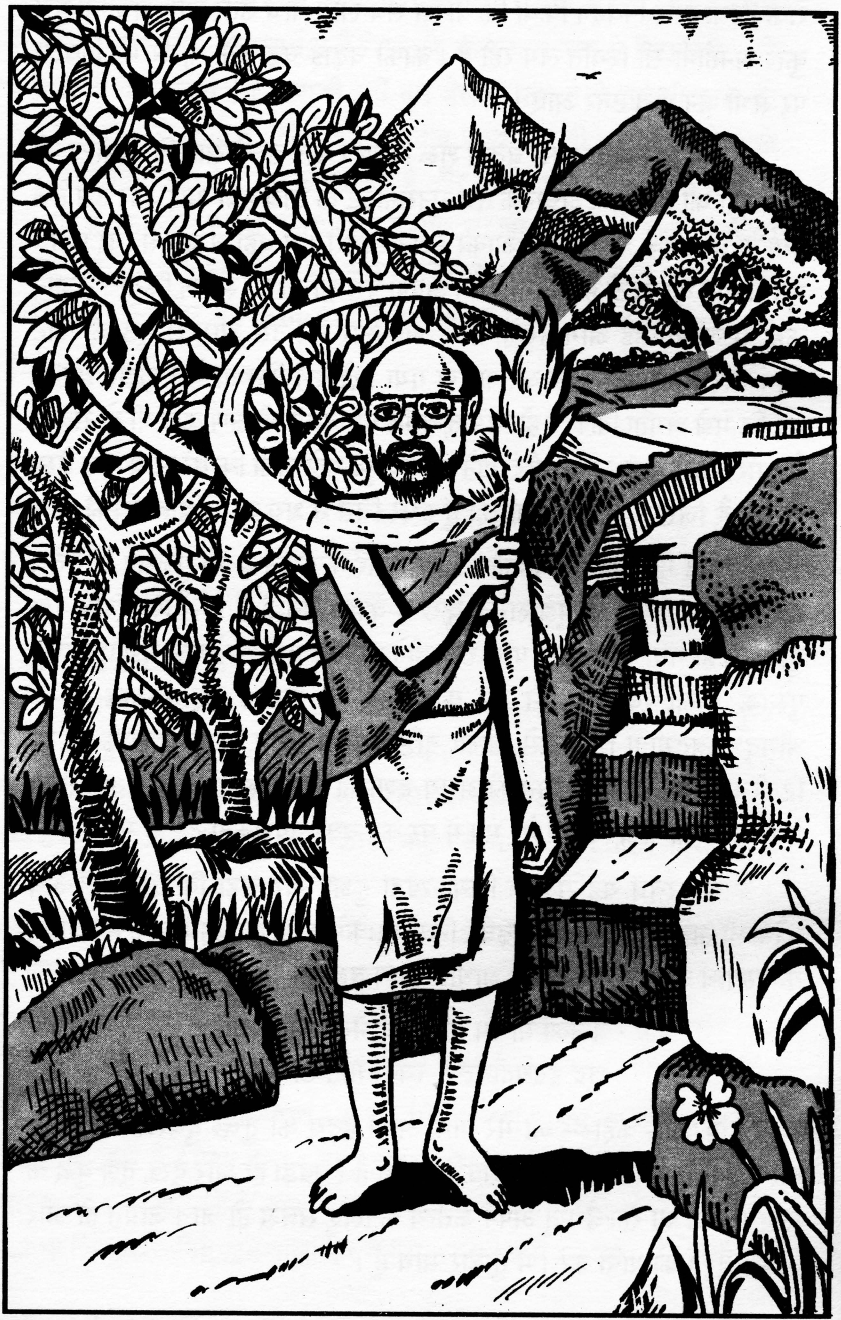

भय को दूर करने के लिए हम अपने सोए पौरुष को जगाएँ।

पौरुष जगाएँ, भय भगाएँ

गीता के इस श्लोक का मुझ पर बड़ा उपकार रहा। इसी से उऋण होने के लिए ही मैंने दो वर्ष पूर्व श्रीमद्भगवद्गीता पर विशेष प्रवचन भी दिये। अगर व्यक्ति पुरुषत्वहीन हो जाए, पौरुष शिथिल पड़ जाए तो उसके चित्त में भय की ग्रंथि बन जाती है। एक बार भय की ग्रंथि निर्मित हो जाये तो आदमी छोटा-सा निमित्त पाकर भी घबरा जाता है। तब आदमी निरन्तर भय का ही चिंतन करता है। वह इहलोक और परलोक के भय से ग्रस्त रहता है; वह मृत्यु और वेदना के भय से ग्रस्त रहता है। इसने मुझे ऐसा कह दिया—यह मुझे ऐसा कह देगा—आदमी इन्हीं कल्पनाओं में विचरण कर भयग्रस्त होता रहता है।

भय, डर, खौफ को दूर करने के लिए हम अपने सोए पौरुष को जगाएँ। जीवन में महाभारत का वातावरण बनना स्वाभाविक है, मनुष्य के रूप में किसी भी अर्जुन का विचलित होना भी नैसर्गिक है। हार उसी समय हमारे हाथ में चली आती है, जैसे ही हम किसी भी शंका-आशंका से घिर जाते हैं। वहीं जैसे ही सामना करने का साहस लौट आता है, जीत बिन माँगे ही झोली में चली आती है। भय मात्र मन की दुर्बलता है। हम जीवन में साहस, शौर्य, ऊर्जा, उत्साह का संचार करें, सचमुच, अगले ही पल आप एक बहादुर और शक्तिवान बन चुके हैं।

निरपेक्ष रहें निंदा के भय से

आदमी को एक और जो सबसे बड़ा भय सताता है, वह है—निंदा का भय, लोक-लाज का भय। वह डरता है कि समाज में उसकी निंदा न हो जाए; अगर मैंने ऐसा कर लिया तो लोग क्या कहेंगे, इसीलिए तो आदमी पाप हमेशा छिपकर करता है और पुण्य हमेशा खुलकर करता है। वह सोचता है कि खुलेआम पुण्य करने से उसकी स्तुति होगी, अभिनन्दन होगा। पाप छिपकर करता है कि कहीं कोई देख न ले। जबकि मैं यह कहना चाहूँगा कि आदमी एक दफा पाप भले ही सरेआम कर ले, पर पुण्य सदैव छिपकर करे। किये हुए पाप को सरेआम स्वीकार कर लिया, तो पाप का प्रायश्चित हो गया। छिपकर करने से पाप दुगुना हो जाएगा। ज़हर चाहे छिपकर पियो या सबके सामने, वह अपना असर तो दिखाएगा ही।

अच्छा होगा कि आदमी पुण्य छिप कर करे, ताकि पुण्य का स्तुतिगान न हो, वह हमारा कीर्तिमान न बने वरन् पुण्य भी हमारे जीवन के उद्धार का आधार

बन जाए। इसी तरह दान देना हो तो इस हाथ से दो और उस हाथ को पता भी न चले। किसी की सेवा करो तो इस हाथ से करो, उस हाथ को पता न चले। अभी दो दिन पहले की बात है। निराश्रित बच्चों के लिए विद्यालय चलाने वाले एक सज्जन आए और कहा कि पन्द्रह अगस्त का दिन आ रहा है। हम चाहते हैं कि उस दिन यहाँ वालों की ओर से सभी बच्चों के लिए 'यूनीफॉर्म' की व्यवस्था हो, इसलिए चंदा-चिट्ठा लिखवा दिया जाए। मैंने कहा—इसके लिए चंदे-चिट्ठे की क्या ज़रूरत ? आप जाइये, व्यवस्था हो जायेगी और व्यवस्था करवा दी गई। ऐसा पुण्य करो कि किसी को पता भी न चले, तो उसमें तो मज़ा है।

सहजता से लें हर टिप्पणी

आदमी भयभीत है निंदा के भय से, आलोचना-टिप्पणी के भय से। लोक-लाज व्यक्ति को हर गलत कार्य करने से रोकता है। एक बहुत प्यारी-सी घटना कहना चाहूँगा, एक ऐसी घटना जिसे सारे संसार को सुनाया जाना चाहिए। वह घटना है संत हाकुइन के जीवन की। कहते हैं कि संत हाकुइन अपनी छोटी-सी झौंपड़ी बनाकर किसी गाँव में रहा करते थे। उनके पड़ौस में और भी मकान थे। एक बार एक कुँआरी युवती गर्भवती हो गई। उस युवती के माता-पिता ने उसे बहुत लताड़ा, मारा-पीटा और पूछा कि तेरी कोख में किसका पाप है ? युवती से और कोई नाम लेते न सूझा। उसने झट से संत हाकुइन का नाम ले लिया।

युवती के माता-पिता और परिजन संत हाकुइन के पास पहुँचे और जाकर अपनी बेटी की सारी बात कही। तब संत हाकुइन ने जो शब्द कहे, वे ध्यान देने योग्य हैं। संत हाकुइन ने कहा—'ओह, तो ऐसी बात है, इट्स देट सो !' जब नौ माह पूरे हुए तो प्रसव हुआ। वह संतान नियम के अनुसार संत हाकुइन को लाकर सौंप दी गई 'तुम्हारी संतान है, तुम्ही संभालो।' संत ने बड़े प्रेम-भाव के साथ उसे स्वीकार कर लिया। बच्चे के लालन-पालन के लिए दूध आदि की जो व्यवस्था होनी चाहिए थी, वह व्यवस्था संत जुटा लेते। बच्चे का पालन-पोषण होने लगा।

बच्चा चार-पाँच वर्ष का हो गया। एक दिन युवती की तबियत बिगड़ने लगी, वह मरणासन्न स्थिति में पहुँच गई। उसने अपने घर के सारे सदस्यों को बुलाया और कहा—'मैं निरन्तर इसलिए रुग्ण होती जा रही हूँ कि मैंने एक पवित्र आत्मा पर झूठा आरोप लगाया है।' घर वाले उसकी बात सुनकर आश्चर्यचकित

थे—'क्या कहती हो तुम ?' युवती ने कहा—'हाकुइन के पास जो बच्चा है, वह हाकुइन का नहीं है । मैंने अपने प्रेमी को निंदा और अपयश से बचाने के लिए संत हाकुइन का नाम ले लिया था, लेकिन वह संत इतना महान् है कि उसने अपने पर लगाये गए इस आरोप का, इस झूठे लांछन को भी सह लिया, स्वीकार कर लिया । मैं मृत्यु से पहले इसका प्रायश्चित करना चाहती हूँ ।'

युवती के परिजन फिर संत हाकुइन के पास पहुँचे, सारी बात बताई—सारा यथार्थ सुनाया । संत मुस्कुराये और कहा—'ओह, तो ऐसी बात है, इट्स देट सो ! तुम अब क्या चाहते हो ?' वे बोले—'हम चाहते हैं कि बालक को वापस ले जाएँ ।' संत ने कहा—'ओह, तो ऐसी बात है । ठीक है, ले जाओ ।' यह जीवन की साधना की परम स्थिति है । जहाँ अगर इलजाम भी लगा, तब भी आनंद; इलजाम वापस ले लिया गया तो भी आनंद—ओह, तो ऐसी बात है । जहाँ दोनों स्थितियों में समान आनंद का भाव बना रहा है, वहीं तो आदमी अभय-दशा में जीता है ।

जो आदमी यह सोचता है कि लोग क्या कहेंगे, समाज क्या कहेगा, वह आदमी अपने जीवन में समता और सामायिक को नहीं जी सकता । एक बहुत बड़े संत हुए—स्वामी आनंद, जिन्होंने हिन्दुस्तान में सबसे पहले 'नारी-निकेतन' खोला, जहाँ उपेक्षित, लांछित, विधवा और निराश्रित महिलाओं को आश्रय दिया जाता था । एक बार एक नारी उनके पास आई और कहा—'एक युवक के साथ मेरे प्रेम-संबंध थे । वह युवक मुझे छोड़कर भाग गया है । उसकी संतान मेरे पेट में है । मेरे पीछे और छः बहिनें हैं । अगर उस युवक ने मुझे स्वीकार नहीं किया तो मेरी उन बहिनों की सगाई और शादी नहीं हो पाएगी । मेरा तो जो होगा, सो होगा, पर मेरी बदनामी मेरी बहिनों की ज़िंदगी तबाह कर देगी ।'

युवती की बात सुनकर स्वामी आनंद ने पूछा—'तुम अब क्या चाहती हो ?' युवती का उत्तर था—'मैं चाहती हूँ कि कोई भी युवक मुझसे विवाह कर ले ।' स्वामी आनंद ने अपने कई शिष्यों को समझाया, मगर कोई भी तैयार न हुआ । आखिर पूरे समाज में बात फैल गई । बात कचहरी और पुलिस तक पहुँची । तारीख आ गई और स्वामी आनंद उस युवती को आश्वासन दे चुके थे कि तुम्हारी लाज किसी तरह मैं बचाऊँगा, तुम कोर्ट में पहुँच जाना । अगले दिन कोर्ट में दोनों आमने-सामने थे । युवती ने कार्यवाही से पहले पूछा, 'महोदय, क्या कोई तैयार

हुआ ?' स्वामी आनंद के चेहरे पर उदासी छा गई । उन्होंने कहा—'मैं क्षमा चाहता हूँ । कोई भी तैयार न हुआ ।'

स्वामी आनंद की बात सुनकर युवती चिंतित हो गई । स्वामी आनंद ने कहा—'तुम मुझसे अब क्या चाहती हो ?' वह बोली—'मैं इतना ही चाहती हूँ कि कोई भले ही ज़िंदगीभर मेरे साथ न रहे, मगर कोर्ट में इतना भर कह दे कि मैं इसका पति हूँ । इससे समाज में मेरी अपकीर्ति होने से बच जाएगी ।' स्वामी आनंद ने कुछ सोचा और कहा—'जा तू कोर्ट के भीतर, तेरी यह व्यवस्था हो जायेगी ।' तब उस भरी मजलिस में स्वामी आनंद ने घोषणा की कि 'मैं इसका पति हूँ ।' यह बात सर्वत्र पहुँचा दी जाए । सारी सभा सन्न रह गई ।

युवती की आँखों से आँसू झरने लगे, उसकी लाज बच गई थी । क्या स्वामी आनंद इतने महान् थे ! इतना बड़ा लांछन अपने पर ले लिया ! युवती कोर्ट से बाहर आई, तो स्वामी आनंद उसके पाँवों में गिरकर प्रणाम करके कहने लगे—'माँ, अब तू हमेशा प्रसन्न रहना । मुझे खुशी है कि लोग भले ही अब मुझे निंदित करें, अपमानित करें, लेकिन मैंने एक अबला की आबरू को बचा लिया ।' बस, स्वामी आनंद को इतने से ही संतुष्टि और तृप्ति है । बाकी तो संत की क्या निंदा, क्या यश-अपयश !

शक्ति जगाएँ आत्मविश्वास की

आदमी न तो निंदा के भय से घबराए, न ही अपयश के भय से; न ही इहलोक के भय से और न ही परलोक के भय से । जो चलेगा, वही गिरेगा । जो चलने से ही कतराएगा, मात्र अड़ियल टट्टू बना रहेगा । तुम साहस बटोरो और कर्त्तव्य-पथ की ओर निःशंक होकर बढ़ चलो । भय से आदमी मुक्त रहे, इसके लिए पहला सूत्र होगा—आदमी सदा आत्म-विश्वास से भरा हुआ रहे । आदमी यह ठान ले कि दुनिया में सर्वश्रेष्ठ प्राणी मैं स्वयं हूँ; मेरा मस्तिष्क, मेरा हृदय, मेरा शरीर अपने आप में परमात्मा की सबसे बड़ी सौगात है । आदमी को सदा आत्मविश्वास से भरा हुआ रहना चाहिए ।

भला, हम किस बात से भयभीत हैं ? होनी को टाला नहीं जा सकता और अनहोनी से तू क्यों घबराता है ? नेपोलियन बोनापार्ट जब पर्वतों को लाँघ रहा था तो एक बुढ़िया ने कहा था—'नेपोलियन, तुम वापस चले जाओ, क्योंकि इस पर्वत

को कोई नहीं लाँघ पाया है । पर्वत के बाद फिर उफनती नदी है । उसे भी न लाँघा जा सकेगा । यह संभव ही नहीं है ।' तब नेपोलियन ने कहा था—'माँ, नेपोलियन के लिए 'असंभव' जैसा कोई भी शब्द नहीं है । ऐसा कौन-सा कठिन काम है, जिसे इंसान करना चाहे और पूरा न कर सके ।' बुढ़िया ने कहा—'जिस आदमी के पास इतना परम आत्मविश्वास है कि दुनिया में 'असंभव' जैसा कोई शब्द नहीं, जा तू जीतेगा, यह अल्पास तो क्या, कोई भी ऐसा पर्वत नहीं है जिसको आत्मविश्वास से न हटाया जा सके ।'

हातिमताई जैसे लोगों के सामने से तो पहाड़ खुद ही हट जाया करते थे । वह इतना अधिक मानसिक शक्ति और आत्मविश्वास का स्वामी बन गया था । सम्भव है भौतिक शक्ति भले ही सीमित हो, पर जिसके पास मन की शक्ति है, संकल्प-शक्ति है, मनोबल है, प्रकृति उसके प्रभाव को सौ गुना बढ़ा देती है ।

आत्मविश्वास जाग्रत हो, आदमी सत्यनिष्ठ बने, अपने ईमान पर अडिग रहे । जो झूठा होता है, वह डरता है । जो आदमी सत्यनिष्ठ रहे, वह किसी से क्यों भय खायेगा ! जीवन में सदा सजगता रहे, ईमान रहे, निर्भयता रहे, इन सबके लिए आधार-सूत्र है—आदमी स्वयं को सदा आत्मविश्वास से भरा हुआ पाये । प्रकृति की व्यवस्थाओं को स्वीकार करो; जो होनी है उसको भी स्वीकार करो । जीवन तो किसी बाजीगर का सौदा है । यहाँ रिस्क तो उठानी ही पड़ती है । **जो यह जानकर कि मधुमक्खियों के डंक हैं, शहद के छत्ते के पास नहीं जाता, वह शहद पाने के योग्य नहीं होता** । तुम भयभीत मत होओ । अपना मनोबल जाग्रत करो । सृष्टि को तुम्हारी जरूरत है । तुम सृष्टि की आवश्यकता हो । अगर आवश्यक न होते, तो सृष्टि तुम्हें साकार ही न करती । तुम धरती के लिए उपयोगी हो । अपनी उपयोगिता सिद्ध करो ।

बाँधें, बिखरे सुरों को

जहाँ अभय-दशा है, वहीं अहिंसा की दशा है । जहाँ अभय और अहिंसा दोनों हैं, वहाँ साधना और सफलता स्वयं ही अपना परिणाम देने के लिए तत्पर रहती हैं । दो ही आधार हैं—अभय और अहिंसा । दोनों एक-दूसरे के पूरक और पर्याय बनकर ही दुनिया में फिर से किसी संजय, किसी अशोक को जन्म देते हैं । हम अपने जीवन को अभय और आत्म-विश्वास से आपूरित करें ।

व्यर्थ कोई भाग जीवन का नहीं है,
व्यर्थ कोई राग जीवन का नहीं है ।
बाँध दो सबको सुरीली तान में तुम,
बाँध दो बिखरे सुरों को गान में तुम ॥

जीवन को हम सुरीली तान से भरें । अपने बिखरे स्वरों को गीतों में बाँधें । जीवन संगीत और सौंदर्य से भरा जा सकता है बस, आत्मविश्वास चाहिए, अभय-दशा चाहिए । ध्यान रखो, मौत जीवन में एक बार ही आती है, दो बार नहीं और वह भी उसी दिन, जिस दिन आनी है । फिर भय किस बात का, चिंता किस बात की ! सदा मस्त रहो, निर्भय और आत्मविश्वास के स्वामी बनो ।

ooo

स्वस्थ सोच के स्वामी बनें

स्वास्थ्य बेशकीमती दौलत है । स्वस्थ जीवन का स्वामी होने के लिए जितना शरीर का स्वस्थ होना जरूरी है, उतना ही जरूरी मनो-मस्तिष्क का स्वास्थ्य है । स्वस्थ शरीर ही स्वस्थ मन का आधार बनता है और स्वस्थ मन ही स्वस्थ शरीर का निमित्त । शारीरिक स्वास्थ्य की उपलब्धि के लिए दुनिया भर में कई-कई चिकित्सक हैं, कई-कई चिकित्सालय हैं । सात्त्विक और संतुलित आहार, व्यायाम, स्वच्छ जलवायु, शरीर के स्वास्थ्य को उपलब्ध करने के ये सहज सोपान हैं । संपूर्ण स्वास्थ्य की दृष्टि से शरीर के साथ मन और मस्तिष्क का स्वास्थ्य भी उतना ही जरूरी है ।

अगर हम शरीर की दृष्टि से देखें तो इंसान शरीर से बहुत ही निर्बल और असहाय नजर आता है । वह न तो किसी चिड़िया की तरह आसमान में उड़ सकता है, न ही किसी मगरमच्छ-मछली की तरह पानी में तैर सकता है और न ही किसी तितली-भौंरे की तरह फूलों पर मँडरा सकता है । मनुष्य के पास न तो बाज़-सी दृष्टि, बाघ-सी ताकत, चीते की फूर्ति है । इंसान की हैसियत इतनी-सी होती है कि एक छोटा-सा मच्छर, एक छोटा-सा बिच्छू भी डंक मार दे तो वह तिलमिला उठता है, उसकी काया उसी समय धराशायी हो जाती है ।

इंसान अपने शरीर की दृष्टि से बहुत ज्यादा समर्थ-सम्पन्न और सक्षम नहीं

होता, मगर कुदरत ने मनुष्य को एक बहुत बड़ी अकूत संपदा दी है, जिसके आगे पृथ्वी भर की सारी संपदाएँ तुच्छ और नगण्य हैं, वह है—सोचने की क्षमता । अगर मनुष्य के जीवन से सोचने की क्षमता को अलग कर दिया जाए तो शायद मनुष्य पशुतुल्य ही होगा और किसी जानवर को सोचने की क्षमता प्रदान कर दी जाए तो उसकी स्थिति मनुष्य के समकक्ष होगी ।

सोच ही मनुष्य है

मनुष्य के पास विचार-शक्ति ऐसी अनुपम सौगात है कि जिसके चलते वह धरती के सारे पशुओं और पक्षियों के बीच अपने आप में सृष्टि की सर्वश्रेष्ठ कृति बन सकता है । आप ज़रा ऐसे इंसान की कल्पना करें कि जिसके पास सोचने की क्षमता नहीं है । आप ताज्जुब करेंगे तब हर मनुष्य, चाहे वह बालक हो या प्रौढ़, वन-मानुष का चेहरा लिये हुए होगा । कोई व्यक्ति इसीलिए जड़-बुद्धि कहलाता है, क्योंकि उसका मस्तिष्क विकसित नहीं हुआ है । मस्तिष्क की अपरिपक्वता व्यक्ति को पूरे शरीर से अपंग भी बना देती है । जीवन-विज्ञान कहता है कि जिस व्यक्ति का मस्तिक विकसित हो चुका है, वह भले ही किसी हेलन केलर की तरह अंध-बधिर या मूक हो, लेकिन ऐसा सृजन कर सकता है जो अविस्मरणीय हो, अनुकरणीय हो ।

सोच ही मनुष्य है । सोच को अगर किसी भी जन्तु के साथ जोड़ दिया जाए तो वह भी मनुष्य हो जाएगा । इंसान के पास जीवन की ऐसी अनुपम सौगात है, फिर भी कोई इंसान अपनी सोच को स्वस्थ रखने के लिए सचेष्ट नहीं है । अगर शरीर जुकाम या बुखार से ग्रस्त हो जाए तो हम तुरंत डॉक्टर की तलाश करते हैं, मगर अपनी विकृत, अपरिष्कृत सोच को संस्कारित करने के लिए, उसको स्वस्थ बनाने के लिए भला कितना उपाय कर पाते हैं । जीवन में पाई जाने वाली किसी भी सफलता का अगर वास्तविक रूप से किसी को श्रेय दिया जाना चाहिए तो वह व्यक्ति की अपनी सोच और कार्य-शैली है ।

व्यक्ति चेहरे की सुंदरता और 'स्मार्टनेस' पर ही अपना अधिक ध्यान देता है, लेकिन किसी का भी ध्यान मन की खूबसूरती और स्वास्थ्य पर नहीं जाता, जब कि चेहरे का सौंदर्य पंद्रह प्रतिशत ही जीवन की किसी सफलता में आधारभूत बनता है, जब कि सोच और जीवन-शैली का योगदान पिच्यासी प्रतिशत है । व्यक्ति

की जैसी सोच होगी, वैसे ही उसके विचार और वचन होंगे। जैसे उसके विचार होंगे वैसे ही उसके कर्म होंगे, जैसे कर्म होंगे वैसा ही उसका चरित्र बनेगा। जो व्यक्ति अपने चरित्र को निर्मल रखना चाहता है, अपनी आदतों और कर्मों को सुधारना चाहता है, वह अपना ध्यान जड़ों की ओर आकर्षित करे। जब तक वह जड़ों तक नहीं पहुँचेगा, वह शरीर से स्वस्थ रहकर भी मन से हमेशा रुग्ण बना रहेगा। जिस दिन तुम अपने मन से स्वस्थ हो गए, तुम्हारा शरीर अपने आप स्वास्थ्य के सोपानों को पार करने लग जाएगा।

बेहतर फलों के लिए बुवाई हो बेहतर

मनुष्य का मस्तिष्क एक बगीचे की तरह होता है, जिसमें अगर अच्छे बीज बोओ, तो अच्छे फल और फूल लगेंगे और बीज केक्टस और काँटों के होंगे तो वे केक्टस और काँटे ही पैदा करेंगे। अगर बगीचे में कुछ भी न बोया गया तो निश्चित है कि घास-फूस तो उग ही आएगी। इंसान को दो-तरफा प्रयास करने होंगे—पहला, अच्छे बीच मस्तिष्क के बगीचे में बोए जाएँ और दूसरा, जो अवांछित खरपतवार, घास-फूस उग आई है, उसे उखाड़ फेंके। ऐसा नहीं कि केवल प्रेम और सम्मान के ही बीज बोने हैं, वरन् क्रोध और वैर की जो अनचाही झाड़ियाँ उग आई हैं, उन्हें भी समूल नष्ट करना होगा।

व्यक्ति माली की तरह मस्तिष्क के बगीचे की निराई-गुड़ाई का पूरा-पूरा ख्याल रखे, वरना जंगली घास ऐसी जड़ें जमा लेंगी कि उन्हें निर्मूल करना मुश्किल होगा। आप यहाँ आए हैं तो संभव है कि ऐसी कुछ बातें मिल जाएँ कि जो काम की हों। जो भी 'सार-सार' मिले, उसे ग्रहण कर लें और थोथा को उड़ा दें। हर स्वीकार्य सोच और विचार को ग्रहण कर लें और शेष को एक तरफ कर दें।

जैसा बीज बोओगे, वैसा ही फल पाओगे। आम के बीज बोओगे तो आम के फल मिलेंगे और बबूल के बीज बोओगे तो बबूल के फल ही मिलेंगे। जैसा आप सोचेंगे, वैसा ही आपके जीवन में घटित होगा। आज व्यक्ति जैसा है, वह अतीत में सोचे गए विचारों का परिणाम है और भविष्य में व्यक्ति वर्तमान विचारों का परिणाम होगा। आज अगर हमारे जीवन में आक्रोश, स्वार्थ, छीना-झपटी, छल-प्रपंच है तो जरूर हमने अतीत में ऐसे बीज बोये होंगे। कोई भी दूसरा आदमी अगर हमारे साथ बुरा व्यवहार करता है तो यह हमारे द्वारा अतीत में किये गए

दुर्व्यवहार का ही प्रतिफल है । आप किसी विवाह-उत्सव में गये और आपने वहाँ इक्यावन रुपये का लिफाफा थमाया, तो बदले में आप भी इक्यावन रुपये ही पाएँगे, एक सौ एक नहीं । यही जगत की कर्म-प्रकृति है ।

जगत : प्रतिध्वनि मात्र

यह जगत एक प्रतिध्वनि है, यहाँ आप जो चिल्लाओगे, वही लौटकर आप पर बरसेगा । अगर हमने किसी को गालियाँ दी हैं तो मानकर चलो कि आज नहीं तो कल वे गालियाँ लौटकर आएँगी, फिर उनसे भय कैसा ! अगर उनसे बचना चाहते हो तो पहले से ही सावधानी बरतो और मुँह से गाली मत निकालो । गीत के बदले में गीत और गालियों के बदले में गालियाँ ही मिलती हैं ।

आप किसी तलैया में पत्थर फेंककर देखो तो पाओगे कि एक तरंग पैदा हुई । वह तरंग किनारे पर पहुँचती है, लेकिन वहीं खत्म नहीं होती, अपितु वहाँ से लौटकर वहीं आती है, जहाँ से उसका उद्‌भव हुआ था, ठीक उसी स्थान तक जहाँ पत्थर गिरा था । यही जीवन का विज्ञान है कि हम जो अपनी ओर से औरों के साथ गलत व्यवहार करते हैं, बुरा आचरण करते हैं, छल-प्रपंच करते हैं, वह जाता है और किनारे से लौटकर पुनः-पुनः आता है । अभी तो आप बड़े खुश होते हैं कि आपने दूध में मिलावट कर दुनिया को ठगा, मगर वही मिलावट आपके आँखों के तारे के बीमार पड़ने पर 'इंजेक्शन में मिलावट' के रूप में लौटती है । तब आप हक्के-बक्के रह जाते हैं । आपको अपने किये पर पछतावा होता है, लेकिन तब तक बहुत देर हो चुकी होती है । काश, पहले सँभल जाते ।

दुर्व्यवहार के बदले में दुर्व्यवहार ही लौटकर आता है । आज आपने किसी पड़ौसी के साथ दुर्व्यवहार किया, तो उस दुर्व्यवहार की तरंग ब्रह्माण्ड तक पहुँचेगी और आपके अधिकारी को प्रभावित करेगी । फिर आपका अधिकारी आपके साथ दुर्व्यवहार करेगा । यह जगत लौटाता है । अपने तरीके से लौटाता है । आप चलते वक्त अगर किसी चींटी को बचाते हैं, तो ऐसा करके आपने चींटी को ही नहीं, अपने आपको भी बचाया है, क्योंकि यह चींटी कोई और नहीं; सम्भव है हमारे अपने दिवंगत दादाजी ही इस रूप में हों । बच सको तो इस तरह तुम पाप से बच जाओ । यह जगत की अनूठी व्यवस्था है ।

जो व्यक्ति आज किसी बकरे को काटता है, तो वह यह मानकर चलें कि

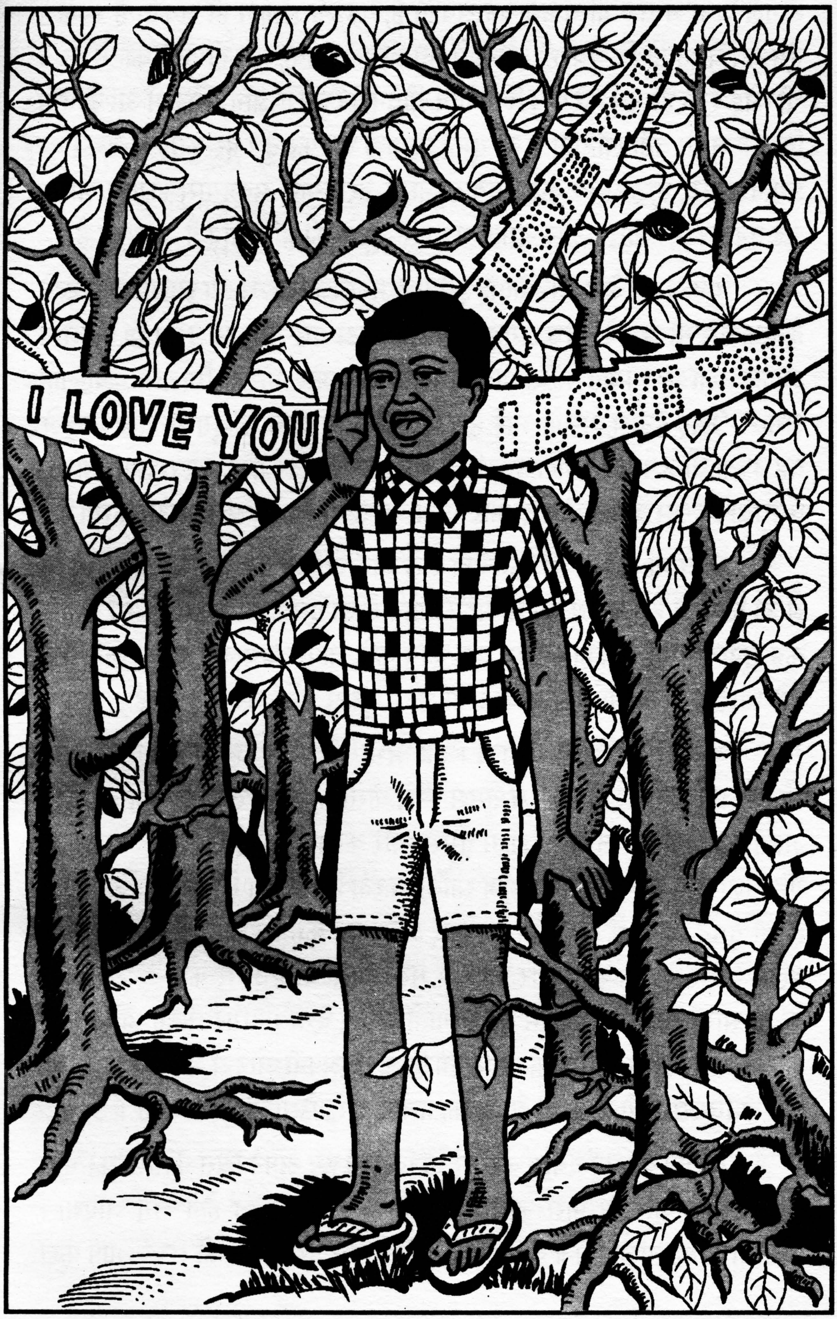
I LOVE YOU
I LOVE YOU
I LOVE YOU

जीवन में वही लौटकर आता है, जो हमने अपनी ओर से समर्पित किया है।

अगले जन्म में वह भी बकरा बन सकता है, वह भी हलाल हो सकता है । आज तुम गर्व करते हो कि एक ही झटके में मैंने हलाल किया, वैसे ही तुम्हें काटते वक्त भी कोई ऐसा ही गर्व करेगा । जिस दिन जीवन का यह विज्ञान समझ में आ जाएगा कि यह जगत वही लौटाता है जो तुमने दिया है तो फिर तुम हर बुराई से बचने का प्रयत्न करोगे, तुम्हारा हर कृत्य सुकृत्य होगा, हर प्रयास सद्प्रयास होगा । लाइफ इज एन इको—जीवन और जगत मात्र एक-दूसरे की प्रतिध्वनि है, अनुगूंज है ।

यह जगत कैसे लौटाता है, इसे एक मनोवैज्ञानिक घटना से समझें । कहते हैं, एक बार माँ-बेटे के बीच झगड़ा हो गया । बेटा चार-पाँच साल का था, गुस्से में आकर चला गया । वह पहुँचा बीच ज़ंगल में और जोर-जोर से रोने लगा, चिल्लाने लगा—'आई हेट यू, मम्मी, आई हेट यू ।' जैसे ही बच्चे के मुँह से शब्द निकले, वह बच्चा चौंक पड़ा । जंगल उसकी ही आवाज़ को प्रतिध्वनित कर रहा था । बच्चा घबराया कि इस जंगल में कोई और भी बच्चा रहता है जो उससे नफरत करता है ।

बच्चे माँ से भले ही कितने ही रूठ जाएँ, लेकिन डर के क्षणों में वे उसी माँ से जा लिपटते हैं । वह बच्चा भी माँ की गोद में जा दुबका और उसने सारा वृत्तान्त कह सुनाया । माँ ने कहा—'तुम एक काम करो, वापस जंगल में जाओ और वहाँ बड़े प्यार से, मुस्कान के साथ कहो, हाँ, हाँ मैं तुमसे प्यार करता हूँ, आई लव यू ।'

बच्चा फिर जंगल में गया । वह अभी भी घबरा रहा था, फिर भी उसने साहस बटोरकर कहा—'हाँ, मैं तुमसे प्यार करता हूँ, आई लव यू ।' जंगल उसी आवाज़ को लौटाने लगा—'हाँ, मैं तुमसे प्यार करता हूँ, आई लव यू ।' जीवन का यह विज्ञान जीवन को एक अनुगूँज साबित करता है । जीवन में वही लौटकर आता है, जो तुमने किया है, कहा है । इसलिए अगर यह कहे कि 'आई हेट यू' तो सारा ब्रह्माण्ड तुम्हारे प्रति घृणा और क्रोध से भर जाएगा और अगर कहो—'आई लव यू' तो सारा ब्रह्माण्ड तुम्हें प्रेम की सौगातों से भर देगा । अगर चाहते हो कि मुझे औरों से हमेशा प्रेम, शांति और सौम्यता मिले, तो अपनी ओर से भी ऐसा ही सोचो, ऐसे ही विचार रखो, ऐसी ही वाणी का प्रयोग करो, ऐसा ही चरित्र रखो ।

विज्ञान का यह प्रयोग करके देखें कि जब हम अपने चित्त में हिंसा का भाव लेकर किसी फूल के पास जाएँगे तो वह फूल भी कंपित होने लग जाएगा । फोटोग्राफी की ताज़ा खोजें यही कहती हैं कि अगर प्रसन्नभाव को लेकर आप फूल

के पास गए तो मुरझाया हुआ फूल भी खिल उठेगा। यही प्रयोग इंसान के साथ भी किया जा सकता है। अगर आप प्रेम की भावना को लेकर किसी के घर पहुँचे हैं, तो आपकी खातिरदारी का रूप ही कुछ और होगा।

घर का वातावरण सोच पर प्रभावी

सोच को हम कैसे बदलें, स्वस्थ सोच के स्वामी कैसे बनें ? इस मुद्दे पर आने से पहले हम इस बात पर गौर करें कि आखिर वे कौनसे कारण होते हैं जिनके चलते हमारी सोच प्रभावित होती है ? मेरे देखे हमारी सोच सर्वप्रथम हमारे घर के वातावरण से प्रभावित होती है। आदमी के घर का जैसा वातावरण होगा, वैसी ही आदमी की सोच और विचारधारा रूप-आकार ले लेती है। अगर घर का वातावरण प्रेमपूरित है तो आदमी के विचार भी वैसे ही प्रेममय होंगे और अगर घर का वातावरण कलहपूर्ण है तो व्यक्ति के सोच-विचार भी वैसे ही होंगे। अगर घर में मियां-बीवी झगड़ते हैं तो उसका असर बच्चों पर भी पड़ेगा, वे भी वैसा ही सीखेंगे। पति-पत्नी में प्रेम-अपनत्व है तो बच्चे भी प्रेम की भाषा सीखेंगे। व्यक्ति चाहता है कि बच्चे संस्कारित हों, आज्ञाकारी हों, विनम्र हों तो वह घर का वातावरण वैसा ही संस्कारवान बनाए।

एक व्यक्ति को चोरी के अपराध में न्यायाधीश द्वारा सजा सुनाई जा रही थी। न्यायाधीश ने कहा—'तुम्हारी चोरी सिद्ध होती है और तुम्हें छह माह की सजा मुकर्रर की जाती है।' उस व्यक्ति ने कहा—'ठहरो जज साहब, मुझे दंड देने से पहले मैं चाहता हूँ कि मेरी माँ को भी सजा मिले, मेरे पिता को भी सजा मिले।' जज ने पूछा—'उन्हें किस अपराध में सजा दी जाए ?' व्यक्ति ने कहा—'मुझे जो सजा मिली है, उसके असली हकदार तो वे ही हैं। उन्हीं के कारण मुझमें अपराध की प्रवृत्ति पनपी। अगर वे पहले दौर में ही मेरी अपराधी प्रवृत्तियों पर अंकुश लगा देते, तो यह नौबत ही नहीं आती।'

इसके विपरीत, एक बार एक बच्ची से उसके अध्यापक ने पूछा—'बिटिया, आखिर ऐसी क्या बात है कि तुम सबके साथ इतनी शालीनता से, इतनी मधुरता से पेश आती हो ? यह सीख तुमको किससे मिली ?' बच्ची ने कहा—'सर, इसमें नई बात कौन-सी है ! मेरे घर में सारे ही लोग एक-दूसरे से इसी तरह पेश आते हैं।' अध्यापक कह उठा—'धन्य है तुम्हारे परिवारजनों को कि जहाँ घर का

वातावरण ही इतना शालीन है ।'

आप यदि घर में 'तुम-तुम' कहोगे तो आपका बच्चा भी दूसरों को 'तुम' कहेगा । आजकल एक फैशन-सी चल पड़ी है कि पति हमेशा अपनी पत्नी को 'तुम' कहता है और पत्नियाँ भी कहाँ पीछे हैं, वे भी अपने पति को बेधड़क 'तुम' कहती हैं । अगर आप किसी को 'तुम' कहते हो तो 'तुम' कहना अपने आप में दूसरे को अपमानित करना हो गया । पति-पत्नी आपस में 'तुम' कहने की बात तो छोड़ें, अपने बच्चों को भी 'तुम' न कहें । अगर आप ऐसा करते हैं तो आपका बच्चा जिंदगी में किसी को 'तुम' नहीं कह पाएगा । आपके घर का वातावरण ही आपके बच्चे में वांछित संस्कारों का बीज-वपन कर सकता है ।

संगति का असर सोच पर

मनुष्य के मस्तिष्क को प्रभावित करने वाला दूसरा तत्त्व है—संगति, सोहबत । इससे बहुत बड़ा फर्क पड़ता है कि व्यक्ति किन लोगों के साथ जीता है, उठता-बैठता है । कौन व्यक्ति कैसा है, अगर यह पहचानना हो तो उसके दोस्तों की जाँच-पड़ताल करो । जैसे दोस्त होंगे, वैसा ही व्यक्ति का व्यक्तित्व बनता चला जाएगा । अच्छे लोगों के बीच अगर बुरा आदमी भी बैठेगा तो वह भी जरूर अच्छा बन जायेगा और बुरे लोगों के बीच अगर अच्छा आदमी भी बैठ गया, तो उसे बुरा होने से कोई रोक नहीं सकता । काला और गोरा आदमी पास-पास बैठेंगे तो रंग भले ही न बदले, लेकिन एक-दूसरे के गुण-अवगुण जरूर प्रभावित होंगे ।

अगर गंगा का पानी नाली में बहा दें तो गंगा का पानी भी गंदला हो जाता है और नाली का पानी ले जाकर गंगा में मिला दें तो नाली का पानी भी गंगोदक बन जाएगा । अगर शराब की दुकान पर खड़े होकर दूध भी पीओगे तो लोग आपको शराबी ही समझेंगे । जैसी संगति और सोहबत मिलती है, आदमी का जीवन वैसा ही बनता चला जाता है । अगर बादल से पानी की एक बूँद टपकती है तो जमीन पर गिरते ही वह मिट्टी में मिट जाती है, अपना अस्तित्व खो देती है । पानी की वही बूँद अगर केले के पेड़ के गर्भ में जाकर गिर जाए तो कपूर का रूप धारण कर लेती है । वही बूँद गरम तवे पर जा गिरे तो भस्म हो जाती है । वही बूँद अगर सर्प के मुँह में जा गिरे तो ज़हर बन जाती है । वही बूँद सीप में गिर जाए तो मोती बन जाती है । यही संगति का असर है, इसलिए जिंदगी में अकेले रहना कोई

पाप नहीं है, मगर गलत आदतों से जुड़े व्यक्ति की मैत्री करना पाप का निमित्त ज़रूर बन सकती है। मित्र बनाएँ तो कृष्ण जैसे व्यक्ति को बनाएँ कि सुदामा नौनिहाल हो जाए। अगर शकुनि जैसे लोगों को मित्र बनाओगे तो अपना भी तहस-नहस करोगे और अन्य लोगों का भी बुरा करोगे।

शिक्षा : विचारधारा की आधारशिला

हमारी सोच और विचारधारा को जो तीसरा तत्त्व प्रभावित करता है, वह है—हमारी शिक्षा। हम कैसी शिक्षा ग्रहण करते हैं, हमारी शिक्षा का स्तर क्या है, इसका हमारे जीवन पर बहुत बड़ा असर पड़ता है। अगर शिक्षा का स्तर निम्न है, तो सोच का स्तर भी निम्न होगा और यदि शिक्षा का स्तर उच्च है, तो सोच का स्तर भी उच्च होगा। वही शिक्षा, शिक्षा है जो जीने की कला सिखाए, जीने की अन्तर्दृष्टि प्रदान करे। अगर आप हिटलर, चंगेज खाँ, तैमूर लंग का जीवन-चरित्र पढ़ते हैं तो मैं नहीं जानता कि ऐसे दुःस्वप्नों को पढ़कर आप अपने जीवन में कौन-सी प्रेरणा ग्रहण करेंगे। पढ़ना है तो सम्राट अशोक का जीवन-चरित्र पढ़ें; मेक्समूलर, शेक्सपीयर, रवीन्द्रनाथ टैगोर, गाँधी की रचनाओं को पढ़ें। ऐसे सकारात्मक लोगों के सकारात्मक संदर्भों को पढ़ें, तो हमारी सोच और शिक्षा का स्तर सुधरेगा। अगर अश्लील साहित्य को पढ़ोगे तो आपके जीवन में अश्लीलता आएगी और सौम्य-भद्र साहित्य पढ़ोगे तो आपके जीवन में वैसी ही सौम्यता और शालीनता आएगी।

अगर आप अपने घर में एक ऐसी पत्रिका ला रहे हैं जिसका मुखपृष्ठ ही भद्दा-बेहूदा है, तो ध्यान रखें, उस मुखपृष्ठ को देखकर आपके छोटे बेटे के मन में भी माँ-बहिन के प्रति विकृत भाव ही जगेंगे। टी.वी. देखें तो इस बात का पूरा विवेक रखा जाना चाहिए कि कौन-सा कार्यक्रम सब लोगों के बीच बैठकर देखने लायक है। ऐसा न हो कि टी.वी. में बलात्कार का दृश्य चल रहा है और देवर-भाभी सभी एक साथ बैठे उसे देख रहे हैं। टी.वी की अच्छी शिक्षाओं को ग्रहण करें, अच्छे कार्यक्रम, अच्छे धारावाहिक देखें।

आप सोचें कि आप अपने घर में कैसा वातावरण बनाना चाहते हैं, कैसी शिक्षाएँ देना चाहते हैं। मुझे याद है, एक महानुभाव हमारे पास पहुँचे। वे हमारे पास बैठे कुछ चर्चा कर रहे थे कि बाहर से उनकी कार के टेप-रिकॉर्डर से आवाज़

आई । एक बेहूदा गाना चल रहा था । महानुभाव ने कहा कि बच्चों ने चालू कर दिया होगा । मैंने कहा—'क्या आप ऐसी कैसेट चलाते हैं ? संगीत सुनना गलत नहीं है, मगर वह संगीत सुना जाए जो जीवन को सुख-सुकून दे । यह संगीत आपके बच्चों को कौन-से संस्कार दे रहा है ? ऐसा संगीत दूषित और प्रदूषित सोच देने के अलावा और कुछ नहीं कर सकता । फिर चाहे आप इन्हें मेयो कॉलेज में पढ़ाएँ या दून के विद्यालय में, इनका नजरिया सदा विकृत और दूषित ही बना रहेगा ।

मेरी बात सुनकर उन महोदय ने कहा—'साहिब, यह कैसेट मेरा नहीं, ड्राइवर का है ।' मैंने कहा—'ज़रा तुम यह सोचो कि तुम्हारे ड्राइवर और तुम्हारे स्तर में फर्क ही क्या रहा ? क्या तुम दोनों का स्तर समान समझते हो ? ड्राइवर ने वह कैसेट चलाई, लेकिन वह कैसेट ड्राइवर की कार में नहीं, तुम्हारी कार में चल रही है, संस्कार तुम्हारे घर के दूषित हो रहे हैं ।' मेरी बात सुनकर उसका लज्जित होना स्वाभाविक था । सही है, शिक्षा तो वह हो जिससे हमें जीने की कला आत्मसात् हो, जीने की शैली मिले और हमारे जीवन का स्तर ऊँचा उठे ।

सोच हो सत्यम् शिवम् सुन्दरम्

व्यक्ति की जैसी सोच और उसके विचार होंगे, उसका व्यक्तित्व वैसा ही निर्मित होगा । अगर आप अपनी ओर से सत्य के बारे में सोचेंगे तो आपके जीवन में सत्य उतरेगा, अगर आप शिवम् के बारे में सोचेंगे तो आपके जीवन में शिवम् घटित होगा और यदि सौंदर्य के बारे में चिंतन करेंगे तो हमारे जीवन में सौंदर्य अवतरित होगा । सत्य के बारे में सोचने वाले व्यक्ति के जीवन में असत्य रह ही नहीं जाता और शिवम् के बारे में चिंतन करने वाले व्यक्ति के द्वारा खून की होली नहीं खेली जा सकती । जो व्यक्ति शिवम् और सौंदर्य के बारे में चिंतन करेगा, वह व्यक्ति कभी भी किसी पर गलत नजर नहीं डालेगा, क्योंकि वह जानता है कि गलत नजर उठाना भी अपने आप में एक कुकृत्य है ।

सौंदर्य के नाम पर हमने केवल लिपस्टिक और पाउडर पर ही ध्यान दिया है । हमने कभी भीतर के सौंदर्य पर ध्यान हीं नहीं दिया । व्यक्ति अगर भीतर के सौंदर्य के बारे में सोचता है, उस पर विचार करता है तो उसका जीवन अपने आप सुंदर होता चला जाएगा । क्या आपने गाँधी को पारंपरिक सौंदर्य के पैमाने पर परख कर देखा है ? गाँधी उस दृष्टि से बिलकुल सुंदर नहीं थे, फिर भी उस आदमी

के चित्त में, उसके मानस में चलने वाले सत्यम्-शिवम्-सौंदर्यम् के चिंतन ने उन्हें सत्यमय-शिवमय-सुंदरमय बना दिया था।

गाँधी जब लंदन पहुँचे तो वहाँ सभी सूट-बूट-टाई में थे, मगर वे उसी धोती में थे, वही अंगोछा कंधे पर डाले हुए, वे ही साधारण-चप्पलें पैरों में पहने हुए। महारानी अगवानी के लिए खड़ी थी। हजारों पेंट-कोट वालों के बीच उस अधनंगे फकीर का भी अपना क्या सौंदर्य था! उसकी खूबसूरती के आगे तो सभी का सौंदर्य फीका पड़ रहा था। ऐसा ही सौंदर्य निर्वस्त्र महावीर का और गेरुआ पहने बुद्ध का था। आदमी के जीवन में चलने वाला सत्य, शिव और सौंदर्य का सतत चिंतन उसे सुंदर करता चला जाता है। आप किसी बूढ़े आदमी को देखो तो शायद देखने की इच्छा नहीं होगी, मगर गाँधी, अरविन्द, टैगोर, महादेवी, नेहरु अपनी सोच और चिंतन के चलते इतने सुंदर होते चले गए कि उस पूरी शताब्दी में ऐसे सुंदर पुरुष शायद ही हुए हों।

गाँधी के विचार सौंदर्य को अभिव्यक्त करने वाला एक और प्रसंग है। कहते हैं, गाँधी सुबह के नाश्ते में रोजाना दस खजूर खाया करते थे। खजूर रात में ही भिगो दिये जाते थे, ताकि वे नरम जाएँ। खजूर भिगोने का दायित्व वल्लभ भाई पटेल को सौंपा हुआ था। एक दिन वल्लभ भाई ने सोचा कि इतनी बड़ी काया और केवल दस खजूर! क्यों न आज पंद्रह खजूर भिगो दिए जाएँ। यही सोचते हुए उन्होंने उस रात पंद्रह खजूर भिगो दिए।

गाँधी अगले दिन सुबह नाश्ता करने लगे। वे सारी खजूरें खा गए। फिर उन्होंने कहा—'क्या बात है भाई पटेल, आज खजूर ज्यादा लग रही है, ज्यादा भिगोई थी क्या?' वल्लभ भाई ने कहा—'बापू, अब आपसे क्या छिपाना! मैंने सोचा कि ये क्या रोज-रोज दस खजूर खाना। दस और पंद्रह में क्या फर्क पड़ता है, इसलिए मैंने आज दस के बजाय पंद्रह खजूर भिगो दिए।'

वल्लभ भाई की बात सुनकर गाँधी ने कहा—'क्यों भाई, मैंने तो आपको केवल दस खजूर का ही कहा था।' पटेल ने कहा—'दस और पंद्रह में क्या फर्क पड़ता है?' गाँधीजी एक मिनट चुप रहे, फिर कहा—'भाई पटेल, कल से तुम केवल पाँच खजूर ही भिगोना।' पटेल ने सोचा कि यहाँ तो लेने के देने ही पड़ गए। मैंने तो तय किया था कि पंद्रह खजूर भिगोऊँ। उन्होंने कहा—'ऐसी भी क्या

बात हो गई ?' क्या मेरी बात इतनी बुरी लग गई ?

गाँधी ने मुस्कुराकर कहा—'नहीं पटेल, ऐसी बात नहीं है । बात दरअसल यह है कि तुम्हारी बात ने मुझे जीवन का सूत्र दे दिया । तुमने कहा कि दस और पंद्रह में क्या फर्क पड़ता है, तभी मेरे मस्तिष्क ने कहा कि जब दस और पंद्रह में कोई फर्क नहीं पड़ता तो पाँच और दस में कौन-सा फर्क पड़ेगा !'

जो आदमी अपने जीवन में निरंतर अपरिग्रह पर सोचता रहा हो, चिंतन करता रहा हो, वही व्यक्ति उदार निर्णय कर सकता है । बाकी तो हर आदमी दस की बजाय पंद्रह ही खाना चाहेगा । जो व्यक्ति निरंतर अपरिग्रह पर सोच रहा हो, वही कहेगा कि जब दस और पंद्रह में कोई फर्क नहीं पड़ता तो दस और पाँच में क्या फर्क पड़ता है !

इस घटना का अपना सौंदर्य है । आखिर इस तरह की बात वही कह सकता है जो व्यक्ति निरन्तर अपरिग्रह और अनासक्ति के बारे में चिंतन-मनन करता रहा हो । संदर्भ चाहे सत्य का हो, चाहे शांति का, कल्याण का हो या सौंदर्य का जीवन में सदा वही सब कुछ मुखरित होता है, जो कि हमारे सोच और स्वभाव में रहा है ।

स्वस्थ सोच के सार्थक सूत्र

जीवन को सहज सुकून देने के लिए जिस पहले बिन्दु की आवश्यकता होती है वह है हमारे सोच का, हमारे विचारों का सकारात्मक होना, संतुलित होना, समग्र होना । नकारात्मकताओं को हर हाल में नकारा जाना चाहिए और सकारात्मकताओं को हर हाल में स्वीकारा जाना चाहिए । 'नेगेटिविटी' हर हाल में दु:खदायी होती है, मनोबल को कमजोर करती है, उत्साह और उमंग को ठण्डा करती है । हम निराशा की बजाय मन में आशा का संचार करें, घुटन की बजाय उत्साह और उमंग को अंतरमन में प्राण-प्रतिष्ठित करें । सोच के प्रति सम्यक् जागरूक न रह पाने के कारण ही हम बहुधा अंतरद्वन्द्व से घिर जाया करते हैं, तनाव के तिलिस्म में उलझ जाया करते हैं, क्रोध और अहंकार के विनाशकारी बीजों को बो बैठते हैं ।

यदि हम मन की हवाई कल्पनाओं में उड़ते रहने की बजाय अपनी सोच को सच्चाई का सामीप्य दे सकें, तो मन की उधेड़बुन को शांत करने में बहुत बड़ी मदद मिल सकती है । कोई भी व्यक्ति अगर अपनी सोच और दृष्टि को उदात्त और

सौम्य बनाने में सफल हो ज़ाता है, तो इससे बढ़कर जीवन की और कोई सफलता नहीं हो सकती । अगर आप बदल सकते हैं तो अपनी सोच को बदलें । ऐसे लोगों के सम्पर्क में आएँ, जिन्होंने बुलन्दियों को छुआ है । अपनी उस दृष्टि को बदल डालें जो औरों में कमियाँ ढूँढा करती है । विनोबा ने लोगों को गुणग्राही होने का अनुरोध किया था । यानी सीधी-सी बात है कि **अगर तुम अपने जीवन से अपने अवगुणों को हटाना चाहते हो, तो औरों के गुणों का सम्मान करना सीखो ।** अपने स्वभाव को बदलने का यह कितना सरल मन्त्र हुआ ।

अगर जीवन में कभी नाकामयाब भी हो जाएँ, तो चिंतित न हों । अपनी नाकामयाबी का कारण तलाशें, उसे दूर करें और दुगुनी ऊर्जा और उत्साह के साथ फिर से काम में लग जाएँ । आपके मन की यह विधायकता एक-न-एक दिन आपको जरूर सफल करेगी । विश्वास रखें आप हर कार्य को कर पाने में समर्थ हैं । बस, आवश्यकता है अपने विचारों को उस सफलता की सुवास से भर देने की ।

हमेशा अच्छी किताबें पढ़ें । ऐसे निमित्तों से स्वयं को बचाकर रखें, जिनका हमारे जीवन पर गलत प्रभाव पड़ता हो । कभी भी किसी के लिए बुरा न सोचें, गाली-गलौच न करें । औरों का सम्मान पाने के लिए उनके प्रति सम्मान भरा बरताव करें, फिर चाहे कोई हमारा कर्मचारी भी क्यों न हो ।

आओ, हम अपने जीवन और चिंतन को मंगलमय बनाने के लिए अपने हर दिन की शुरुआत मंगलमय तरीके से करें—सबके आदर-अभिवादन के साथ, हार्दिकता और मन की मुस्कान के साथ । जैसे सूरज उगने पर गुलाब की कलियाँ और पंखुरियाँ आह्लाद से भर उठती हैं, हमारा मानस भी ऐसे ही आह्लाद से, ऐसी ही खिलावट से आपूरित हो, हरा-भरा हो ।

○○○

जीवन-दृष्टि सकारात्मक बनाएँ

बड़ी प्यारी घटना है : बाल मेले में एक वृद्ध गुब्बारे बेच रहा था । गुब्बारे हीलियम गैस से भरे हुए होते हैं । स्वाभाविक था, आकाश में ऊँचे उठते हुए गुब्बारों को देखकर बच्चे उसकी ओर आकर्षित हों । वह बच्चों को गुब्बारे बेचता भी और बच्चों को अपनी दुकान की ओर आकर्षित करने के लिए जब-तब दो-पाँच गुब्बारे आकाश की ओर भी उड़ा देता । ये उड़ते हुए गुब्बारे ही उसका विज्ञापन होते ।

एक बालक आकाश में ऊँचे उठते हुए, गुब्बारों को देखकर चमत्कृत हो उठा । उसने आश्चर्य भरे स्वर में पूछा—'दादा, आपके गुब्बारों में क्या काले रंग का गुब्बारा भी उड़ सकता है ?' वृद्ध ने बालक को एक ही नजर में देखा । वह प्रश्न का कारण समझ गया । उसने बच्चे से जीवन का रहस्य उद्घाटित करते हुए कहा—'बेटे, गुब्बारा अपने रंग के कारण नहीं उड़ता । गुब्बारे के भीतर जो विश्वास और शक्ति भरी हुई है, उसी की बदौलत वह ऊपर उठता है ।'

वृद्ध-पुरुष का यह अनुभव क्या हमारे लिए प्रेरक नहीं है ? मनुष्य के विकास में भी न तो उसका गोरा रंग सहायक होता है और न ही उसका काला रंग बाधक । मनुष्य का विकास उसके स्वयं में निहित गुणवत्ता के कारण ही संभावित होता है । जाति, कुल, देश और धर्म—ये सब व्यक्ति की कुछ व्यावहारिक व्यवस्थाओं के चरण हैं । व्यक्ति का विकास तो उसकी अपनी सोच, जीवन-दृष्टि

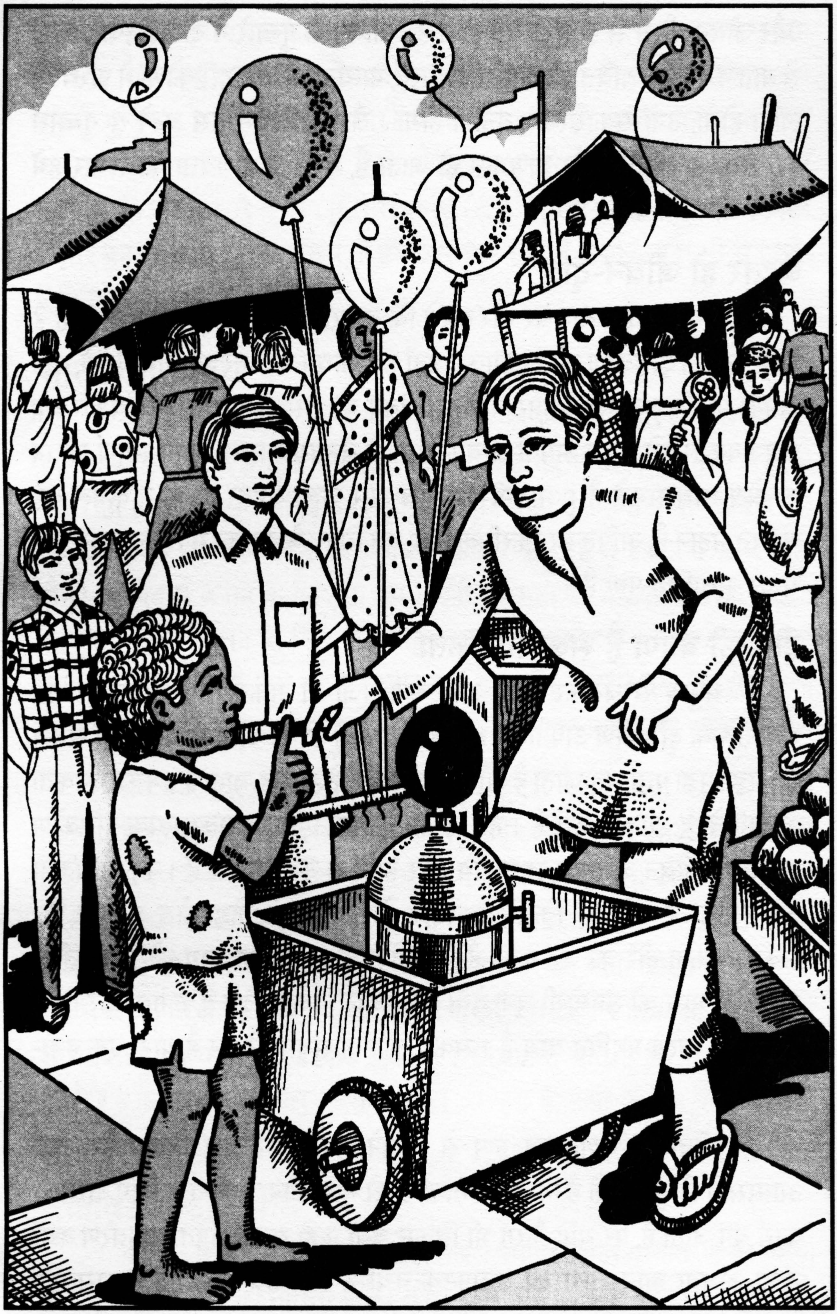

बेटे, गुब्बारा अपने रंग के कारण नहीं, भीतर जो विश्वास और शक्ति भरी हुई है, उसी की बदौलत आकाश तक उठता है।

और जीवन-शैली से ही प्रभावित होता है । जीवन के गुब्बारे में दी गई हवाई फूँकों से बात न बनेगी, व्यक्ति को अपने विश्वासों, मान्यताओं और दृष्टिकोणों में परिवर्तन लाना होगा; उन्हें सकारात्मक बनाना होगा । जैसे हीलियम गैस भरने से गुब्बारा पूरी तरह ऊर्जस्वित और प्राणवन्त हो जाता है, ऐसी ही प्राणवत्ता का संचार हमें अपने जीवन में करना होगा ।

बेहतर हो जीवन-दृष्टि

क्या हम इस बात पर गौर करेंगे कि हमारा सोच और दृष्टिकोण कैसा है ? निम्न स्तर के दृष्टिकोण को अपनाकर जहाँ हम जीवन का स्तर भी गिरा बैठेंगे, वहीं अपनी मानसिकता को बेहतर बनाकर जीवन को उसकी गरिमा और यशस्विता प्रदान कर सकेंगे । हम अपनी जीवन-दृष्टि को बेहतर बनाकर अपने संपूर्ण जीवन का श्रेय साध सकते हैं । आदमी की सोच और शैली बेहतर हो, तो न केवल वह व्यक्ति महान् है, अपितु हर किसी के लिए वह विश्व के उपवन में खिला हुआ एक सुन्दर-सुवासित पुष्प है ।

हीरे की कणि है सकारात्मकता

मनुष्य से बढ़कर भला और क्या पूँजी हो सकती है ! जीवन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाकर हम जीवन की पूँजी को और अधिक बढ़ा सकते हैं । पड़ा-पड़ा पत्ता सड़ जाता है और खड़ा-खड़ा घोड़ा अड़ जाता है । नकारात्मकता आदमी के दु:खों की धुरी है । हम जीवन के प्रति एकमात्र सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाकर जीवन के हर दु:ख, तनाव और हानि से उबर सकते हैं । नकारात्मकता वह हथौड़ा है, जो हर किसी के शांति के शीशे को तोड़-फोड़ डालता है । सकारात्मकता हीरे की वह कणि है, जो शीशे के अनपेक्षित भाग को हटा देती है और शेष भाग को उपयोगी बना देती है । नकारात्मकता विष है, तनाव और चिंता को बढ़ाने वाली प्रदूषित वायु है । सकारात्मकता सुबह की सैर है यानी एक हवा-सौ दवा ।

जीवन में वंशानुगत रूप से मिलने वाले रोग और विकार इस कद्र आत्मसात् हो चुके होते हैं कि उन्हें हटाना, उनसे मुक्त होना व्यक्ति के लिए असाध्य कार्य बन जाता है, पर यदि कैसा भी विकार क्यों न हो या कलुषित वातावरण क्यों न हो अथवा हानि-लाभ की उठापटक क्यों न हो, जीवन के प्रति सकारात्मक

नजरिया अपनाकर वह न केवल विपरीत परिस्थितियों पर विजय प्राप्त कर सकता है, वरन् अपने प्रति अनुरूप और अनुकूल वातावरण भी तैयार कर सकता है। हमारी मुश्किल यह है कि हम अपनी सोच और दृष्टि को बेहतर बनाने के लिए कोशिश नहीं करते। हम केवल चेहरे को सुन्दर बनाने में, चालू स्तर की मैग्जीन पढ़ने में या दुकानदारी में अपना सारा समय व्यय कर डालते हैं। जीवन को कैसे बेहतर बनाया जाए, इसके प्रति न तो हम जागरूक रहते हैं, न ही ईमानदारी से इसके लिए कोशिश कर पाते हैं।

भीतर का सौंदर्य

जीवन में किसी भी क्षेत्र में सफलता प्राप्त करने के लिए दस से बीस फीसदी भाग हमारे शारीरिक सौष्ठव और सौंदर्य पर जाता होगा, पर अस्सी से नब्बे प्रतिशत असर तो हमारे अपने नजरिये और दृष्टिकोण पर जाता है। हमारी मुश्किल यह है कि हम 'स्मार्टनेस' पर स्वयं की समग्रता केंद्रित कर देते हैं। अपनी सोच और शैली को बेहतर बनाने के लिए तो हम अपनी समग्रता का दसवाँ भाग भी केंद्रित नहीं कर पाते। जीवन के लिए यह सौदा बड़ा नुकसानदेह है। जिससे हमें नब्बे प्रतिशत लाभ होता है, उस पर हम ध्यान नहीं देते और जिससे दस प्रतिशत लाभ होता है, हम उतने-से लाभ के लिए स्वयं की नब्बे प्रतिशत ताकत को झोंक देते हैं।

हम एक छोटा-सा उदाहरण लें, विश्व-सुंदरी प्रतियोगिता का। सुदरियाँ तो हजारों-लाखों होती हैं, पर क्या आपको पता है कि उन हजारों-लाखों में से किसी एक का चयन कैसे किया जाता है ? हर सुन्दरी की सोच, शैली और जीवन-दृष्टि के आधार पर। यह तो सर्वविदित है कि दक्षिण अफ्रीका के लोग काले होते हैं और शायद कोई भी व्यक्ति नहीं चाहता होगा कि उसकी पत्नी काली हो। यह भी हम सभी जानते हैं कि विश्व-सुंदरियों की शृंखला में दक्षिण अफ्रीका की महिला भी विश्वसुंदरी का खिताब जीत चुकी है। सीधी-सी बात है कि गुब्बारा अपने काले रंग के कारण नहीं, वरन् उसके भीतर जो कुछ है, उसी के बल पर वह ऊपर उठता है।

वातावरण का प्रभाव

व्यक्ति के नजरिये और रवैये पर सबसे ज्यादा प्रभाव वातावरण का पड़ता है। गुरु विश्वामित्र का निमित्त पाकर कोई पुरुष राम, लक्ष्मण और भरत हुए, वहीं

मंथरा के साथ रहकर कोई राजरानी भी केकैयी हो जाती है। एक त्याग और बलिदान का आदर्श बन जाता है, तो दूसरा मात्र स्वार्थ-पूर्त्ति का।

जब हम वातावरण की बात कर रहे हैं, तो हमें ध्यान देना होगा कि हमारे घर का वातावरण कैसा है; विद्यालय और मित्र-मंडली का वातावरण कैसा है; जिस मोहल्ले में हम रहते हैं, उसका और समाज का वातावरण कैसा है; हमारी धार्मिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि कैसी है, हमें इस बात पर गौर करना होगा। हमें इस बात पर गौर करना होगा कि हमारी शिक्षा-दीक्षा कैसी हुई; वह जीवन में कितनी आत्मसात् हुई; हमारी शिक्षा हमारे लिए रोजी-रोटी की आधार बनी या उसने हमें आनंदमय जीवन जीने की कला भी सिखाई? किसी बेहतर शिक्षक और शिक्षण-संस्थान में अध्ययन कर हम अपनी और अपनी भावी पीढ़ी की स्थिति को सुदृढ़ और सकारात्मक बना सकते हैं। मैं अपने ही जीवन से जुड़ी हुई एक ऐसी घटना का जिक्र करूँगा, जिसमें एक शिक्षक ने मेरी जीवन-दृष्टि ही बदल डाली।

आप बीती

बात तब की है जब मैं नौवीं-दसवीं की पढ़ाई कर रहा था। संयोग की बात कि परीक्षा में मेरी सप्लीमेन्टरी आ गई। क्लास टीचर सभी छात्रों को उनके प्रमाण-पत्र दे रहे थे। जब मेरा नंबर आया, तो न जाने क्यों उन्होंने खास तौर से मेरी मार्कशीट पर नज़र डाली। वे चौंके और उन्होंने एक नज़र से मुझे देखा। मैं संदिग्ध हो उठा, कुछ भयभीत भी। उन्होंने मुझे मार्कशीट न दी। उन्होंने यह कहते हुए मार्कशीट अपने पास रख ली कि ज़रा रुको, मुझसे मिलकर जाना।

जब सभी सहपाठी अपनी-अपनी मार्कशीट लेकर क्लास से चले गये, तो पीछे केवल हम दो ही बचे—एक मैं और दूसरे टीचर। उन्होंने मुझसे बमुश्किल दो-चार पंक्तियाँ कही होंगी, लेकिन उनकी पंक्तियों ने मेरा नजरिया बदल दिया, मेरी दिशा बदल डाली। उन्होंने कहा—'क्या तुम्हें पता है कि तुम्हारे सप्लीमेंटरी आई है? चूँकि तुम्हारा बड़ा भाई मेरा अजीज़ मित्र है, इसलिए मैं तुम्हें कहना चाहता हूँ कि तुम्हारा भाई हमारे साथ इसलिए चाय-नाश्ता नहीं करता, क्योंकि वह अगर अपनी मौज-मस्ती में पैसा खर्च कर देगा, तो तुम शेष चार भाइयों की स्कूल की फीस कैसे जमा करवा पाएगा? तुम्हारा जो भाई अपना मन और पेट मसोसकर भी तुम्हारी फीस जमा करवाता है, क्या तुम उसे इसके बदले में यह परिणाम देते

हो ?'

उस क्लास-टीचर द्वारा कही गई वे पंक्तियाँ मेरे जीवन-परिवर्तन की प्रथम आधारशिला बनी। शायद उस टीचर का नाम था—श्री हरिश्चन्द्र पांडे। जिन्होंने न केवल मुझे अपने भाई के ऋण का अहसास करवाया, अपितु शिक्षा के प्रति मुझे बहुत गंभीर बना दिया और तब से प्रथम श्रेणी से कम अंकों से उत्तीर्ण होना मेरे लिए चुल्लू भर पानी में डूबने जैसा होता। मैं शिक्षा के प्रति सकारात्मक हुआ। माँ सरस्वती ने मुझे अपनी शिक्षा का पात्र बनाया।

व्यक्ति यदि अपने जीवन-जगत में घटित होने वाली घटना से भी कुछ सीखना चाहे, तो सीखने को काफी-कुछ है। सिर के बाल उम्र से नहीं, अनुभव से पके होने चाहिए। **मनुष्य आयु से वृद्ध नहीं होता, वह तब वृद्ध हो जाता है जब उसके विकास की गति अवरुद्ध हो जाती है।**

किसी वृद्ध जापानी को उसकी पचहत्तर वर्ष की आयु में चीनी भाषा सीखते हुए देखकर किसी ने कहा—'अरे भलेमानुष, तुम इस बुढ़ापे में चीनी भाषा सीखकर उसका क्या उपयोग करोगे ? तुम तो मृत्यु की डगर पर खड़े हो। पीला पड़ चुका पत्ता कब झड़ जाए, पता थोड़े ही है।' उस वृद्ध ने प्रश्नकर्त्ता को घूरते हुए देखा और कहा—'आर यू इन्डियन ?' प्रश्नकर्त्ता चौंका। उसने कहा—'निश्चय ही मैं भारतीय हूँ, पर मेरे भारतीय होने का इस प्रश्न के साथ क्या सम्बन्ध ?' वृद्ध ने मुस्कुराते हुए कहा—'भारतीय हमेशा अपने लिए मृत्यु को देखता है और जापानी हमेशा जीवन को। जो सवाल तुमने मुझे आज पूछा है, वह मुझसे तब भी किया गया था जब मैं साठ वर्ष का था। मैंने इस दौरान सात नई भाषाएँ सीखी हैं और पूरे विश्व का दो बार भ्रमण किया है।'

आँखों में बसे जीवन का सपना

जिनकी आँखों में मृत्यु की छाया है, उनका नजरिया नकारात्मक है। जिनकी आँखों में सदा जीवन का सपना है, वे सकारात्मक दृष्टि के स्वामी हैं। दृष्टि के नकारात्मक होते ही मन में उदासी और निराशा घर कर लेती है; व्यक्ति की चिंतन-शक्ति चिंता का बाना पहन लेती है; बुद्धि की उच्च क्षमता होने के बावजूद जीवन में मानसिक रोग प्रवेश कर जाते हैं। हम यदि अपने नजरिये को बदलने में सफल हो जाते हैं, तो जीवन की शेष सफलताएँ आपोआप आत्मसात् हो जाती हैं।

गत सप्ताह ही तमिलनाडू के कारागार से एक ऐसा कैदी छूटा, जो कैद हुआ तब तो किसी हत्या का अभियुक्त था और जब जेल से छूटा, तो सीधा विश्वविद्यालय का प्रोफेसर बना। उसे अपने किये का प्रायश्चित हुआ। उसने कारागार में रहकर ही सारी शिक्षा ग्रहण की। मीडिया ने उसकी विश्वविद्यालय में नियुक्ति की जानकारी दी। इसे कहते हैं जीवन को बदलना, जीवन का रूपान्तरण करना।

स्वयं की जीवन-दृष्टि को सकारात्मक बनाने के लिए हम सबसे पहले अपनी सोच और मानसिकता को सकारात्मक बनाएँ। हम न केवल अपनी सोच को अच्छा बनाएँ, बल्कि हर किसी में अच्छाई ही तलाशें। औरों में अच्छाइयाँ देखना अच्छे व्यक्ति का काम है जबकि किसी में बुराई देखना स्वयं ही बदसूरत काम है। किसी में अच्छाई देखकर हम उसका उपयोग कर सकेंगे, बुराई पर ध्यान देने से हम उसके द्वारा मिलने वाले लाभों से वंचित रह जाएँगे। आखिर दुनिया में ऐसा कौन है जो पूर्ण हो? कमियाँ तो हर किसी में रहती हैं। औरों में कमियाँ देखना क्या कमीनापन नहीं है? गिलास को आधा खाली देखकर यह मत कहो कि गिलास आधी खाली है। तुम्हारी दृष्टि उसके भरे हुए तत्त्व को मूल्य दे कि अजी साहब, गिलास तो पूरा आधा भरा हुआ है। गुलाब के पौधे पर नजर पड़े, तो यह न कहें कि गुलाब में काँटें हैं। हमारी दृष्टि गुलाब पर केंद्रित हो। हमारी भाषा हो—काँटों में भी गुलाब है। यही व्यक्ति की सकारात्मकता है।

होंठों पर रहें आशा के गीत

हम अपने आप पर आत्मविश्वास रखें। जब काले रंग का गुब्बारा भी आकाश को चूम सकता है, तो हम निराशा के दलदल में क्यों धँसे रहें! व्यक्ति आशा के गीत गुनगुनाये, विश्वास के वैभव का स्वामी बने। आत्मविश्वास की बदौलत तो बड़े-से-बड़े पर्वत भी लाँघे जा सकते हैं, फिर जीवन की अन्य बाधाओं की तो बिसात ही क्या! रास्ते पर पड़ी हुई चट्टान हमें यही तो कहती है—'तुम आगे बढ़ो, चट्टानों की चिंता छोड़ो।' आगे बढ़ने का जोश हो, तो चट्टानें स्वतः पीछे छूट जाया करती हैं।

हम स्वयं में घमंड और अभिमान को स्थान न दें, तो सरलता सदा जीवन की शोभा बनती है। व्यक्ति चाहे कितना भी छोटा क्यों न हो, पर जो बेवक्त में हमारे काम आया, उसे सदा याद रखें और उसके प्रति आभार से भरे हुए रहें।

हमारी ओर से सबकी भलाई का ही प्रयास हो, पर नेकी कर कुएँ में डाल। भलाई करें और भूल जाएँ। अपनी की हुई भलाई के अहसान का कभी किसी को अहसास न करवाएँ। जिसका हमने भला किया है और वह हमारा बुरा कर बैठा हो, तो खेद न लाएँ। जिसके पास जो होता है, वह वही देता है। तुम्हारे पास भलाइयों का भंडार था, तुमने भलाई की। उसकी ओर से बदले में बुराइयाँ लौटें, तो उसके प्रति दया-भाव लाते हुए मात्र मुस्कुरा दीजिए। जीवन में आने वाली हर विपरीतता पर जो मुस्कान और माधुर्य से भरा हुआ रहता है, वह जीवन और जगत के मन्दिर का अखंड दीप है, जिसकी रोशनी से उसका परिसर तो रोशन होता ही है, उसके प्रकाश को देखकर मंदिर के देवता भी प्रमुदित होते हैं।

OOO

पूज्य श्री चन्द्रप्रभ की

चर्चित श्रेष्ठ पुस्तकें

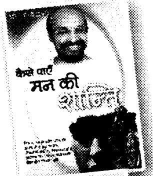

कैसे पाएँ मन की शांति : श्री चन्द्रप्रभ
चिंता, तनाव और क्रोध के अंधेरे से बाहर लाकर जीवन में शांति, विश्वास और आनंद का प्रकाश देने वाली बेहतरीन जीवन-दृष्टि।
पृष्ठ 116, मूल्य 15/-

शांति पाने का सरल रास्ता

शांति पाने का सरल रास्ता : श्री चन्द्रप्रभ
सच्ची शांति, सौन्दर्य और आनंद प्रदान करने वाली चर्चित पुस्तक।
पृष्ठ 100, मूल्य 20/-

सकारात्मक सोचिए, सफलता पाइये : श्री चन्द्रप्रभ
स्वस्थ सोच और सफल जीवन का द्वार खोलती लोकप्रिय पुस्तक।
पृष्ठ 120, मूल्य 15/-

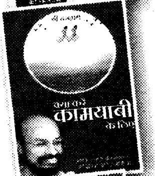

क्या करें कामयाबी के लिए : श्री चन्द्रप्रभ
कामयाबी के लिए हर रोज नई प्रेरणा देने वाली एक सुप्रसिद्ध पुस्तक।
पृष्ठ 100, मूल्य 15/-

आपकी सफलता
आपके हाथ

आपकी सफलता आपके हाथ : श्री चन्द्रप्रभ
सफलता हर किसी को चाहिए, पर उसे पाएँ कैसे, पढ़िये इस प्यारी पुस्तक को।
पृष्ठ 110, मूल्य 20/-

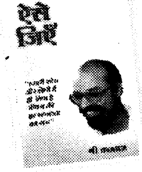

ऐसे जिएँ : श्री चन्द्रप्रभ
जीने की शैली और कला को उजागर करती विश्व-प्रसिद्ध पुस्तक। स्वस्थ, प्रसन्न और मधुर जीवन की राह दिखाने वाली प्रकाश-किरण। पुस्तक महल से भी प्रकाशित।
पृष्ठ : 122, मूल्य 20/-

छह पुस्तकों का सेट एक साथ मंगवाने पर डाक खर्च नि:शुल्क। धनराशि Shree Jit-yasha Shri Foundation के नाम ड्राफ्ट बनाकर जयपुर के पते पर भेजें। वी.पी.पी. से साहित्य भेजना शक्य नहीं होगा। आज ही अपना आर्डर निम्न पते पर भेजें :

जितयशा फाउंडेशन

बी-7, अनुकम्पा द्वितीय, एम.आई. रोड़, जयपुर - 302 001
फोन : 2364737, मो. 94142-55471

लक्ष्य बनाएँ, पुरुषार्थ जगाएँ

श्री चन्द्रप्रभ